श्रीदेवी चिन्तन
एवं
कुछ उपयोगी मन्त्र

हनुमानप्रसाद पोद्दार

नम्र निवेदन

सर्वशक्तिमान् प्रभुका लीला-विलास यह सृष्टि है। जगत्‌के आर्त्त-प्राणियोंके उद्धारके लिये भगवान्‌के विशेष अनुग्रहसे संतजन इस धरा-यात्रापर आते हैं। जगत् धार्मिक, नैतिक और सामाजिक आदि अनेक विभागोंमें बँटा हुआ है। इसलिये अलग-अलग क्षेत्रोंके द्वारा प्राणियोंके उद्धारकी आकांक्षा करनेवाले संत भी अलग-अलग हुआ करते हैं। परन्तु, उन संतोंमें उस कार्य हेतु आवश्यक भगवान्‌की शक्तिका पूर्ण विकास होता है। वे साक्षात् भगवत्स्वरूप ही होते हैं। भारतवर्षके लुप्तप्राय आर्षग्रन्थोंके उद्धार एवं सदाचार तथा भगवद्भक्तिके प्रचारार्थ भगवान्‌के 'विशेष कार्य' हेतु 'भाईजी' श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारका आविर्भाव इस धरापर हुआ। वे एक गृहस्थ संत होते हुए संन्यासीकी साधना, उसकी मर्यादा और व्रत नेम धर्मसे समृद्ध होकर भी मात्र आत्मकल्याणके आकांक्षी न होकर लोक-कल्याणके साधक और साधन बन गये। इसीलिये उनका आचरण अनुकरणीय और जीवन प्रेरणाप्रद है। श्रीभाईजीकी स्थिति साधनाकी उस उच्चतम अवस्थाओंमें थी जहाँ जीव और भगवान्‌का भेद मिट जाता है—***'मैं देखूँ नित श्यामको, मुझको नित घनश्याम। उनमें मैं नित ही रहूँ, वे मुझमें सुखधाम।'*** (पद-रत्नाकर, पद सं० ११४०) तथा ***'मैं उनमें वे मुझमें, वे मैं नित्य निरन्तर एकाकार'*** (पद रत्नाकर, पद सं० ११६८)

ऐसी अवस्थामें जो स्थित हो उसके लिये स्व-परका भेद मिट जाता है क्योंकि 'निज प्रभुमय देखहिं जगत केहि सन करहिं विरोध'। इसीलिये श्रीभाईजी थे तो यद्यपि विशुद्ध सनातनी वैष्णव तथापि श्रीदेवी पूजाके विशेष काल नवरात्रोंमें उनके संरक्षणमें पूजाका विधिवत आयोजन होता था। सभी धर्मों, सम्प्रदायों व मतावलम्बियोंके प्रति उनके हृदयमें अपार श्रद्धा थी क्योंकि उनका विश्वास था कि एक ही तत्त्वकी उपासना विभिन्न प्रकारसे होती है, इसीलिये उन्होंने कहा है—***'देवाराधन करे करायें निज मन मति श्रद्धानुसार'*** (पद-रत्नाकर, पद सं० १३७७)।

श्रीभाईजीको श्रीदेवी रूपका साक्षात्कार हुआ था। वे परमशक्तिके देवीरूपकी उपासनाके सम्बन्धमें लिखते हैं—

'एक ही नित्य सत्य तत्त्वके अनेकों स्वरूप हैं और सभी पूर्ण एवं सनातन हैं। भक्त चाहे जिस रूपमें अपने इष्टरूप भगवान्‌को पूजकर परमात्माके परमधाममें पहुँचकर शाश्वती शान्ति प्राप्त कर सकता है। अवश्य ही मातृरूपकी उपासनामें साधकको स्नेहकी सुधाधारा अपेक्षाकृत बहुत अधिक प्राप्त होती है, क्योंकि मातृहृदय स्वाभाविक ही स्नेहसे भरा होता है, फिर समस्त विश्वके सम्पूर्ण मातृहृदयोंका सारा स्नेह जिन आदिशक्ति जगन्माताके स्नेहसागरकी एक बूँदके बराबर भी नहीं है उस जगज्जननीके स्नेहका तो कहना ही क्या है?'

श्रीभाईजीके देवीरूपकी उपासना और उनके चिन्तनसे सम्बन्धित सामग्री एकत्र करके पुस्तकाकार रूपमें प्रकाशित करनेका उद्देश्य यही है कि देवी–उपासकोंको एक जगह शुद्ध सात्विक मार्गदर्शन मिल सके और किन्हीं कारणवश शक्तिकी उपासना पद्धतिमें आयी पशुबलि इत्यादि बुराइयोंसे वे दूर रहें। इस पुस्तकमें श्रीदेवीजीके सहस्त्रनाम हिन्दीमें हैं जो जन सामान्यके लिये बहुत ही उपयोगी हैं। और, कुछ अन्य उपयोगी मंत्रोंका संकलन भी किया गया है जो इच्छुक साधकोंके लिये विशेष लाभप्रद सिद्ध होंगे क्योंकि वे अनुभूत हैं। अन्तमें अपनी त्रुटियों, भूलोंके लिये करबद्ध क्षमा–याचना करते हुए, निवेदन है कि उन्हें ध्यान दिलानेपर सुधारनेकी चेष्टा की जायेगी। श्रीदेवीजी सर्वकल्याणमयी हैं वे सबका मंगल करें—यही प्रार्थना है।

प्रकाशक

विषय सूची

क्रमसं०	विषय	पृष्ठ
	हरिः शरणम् मंत्र	६
	नित्य प्रार्थना हेतु पाँच श्लोक	७
१	वन्दना	८
२.	जययुक्त श्रीदेवी–अष्टोत्तर–सहस्त्रनाम	८
३.	वन्दनायें	२६
४.	सप्तशतीके कुछ सिद्ध सम्पुट–मन्त्र	३३
५.	शक्ति उपासनाका तात्पर्य	३८
६.	भगवती शक्ति	४५
७.	देवीका विराट शक्तिरूप	६२
८.	श्रीदुर्गाजीका नाम	६४
९.	कुछ उपयोगी मन एवं उनके जप करनेकी विधि (विस्तृत सूची पृष्ठ ६२ पर)	६५
१०.	भगवान् श्रीरामके दर्शन प्राप्त करनेके उपाय	८९

कुछ उपयोगी मन्त्र
एवं
उनके जपकी विधि

विषय सूची

क्रम०	विषय	पृष्ठ सं०
१.	ॐ नमो भगवते वासुदेवाय	६५
२.	ॐ नमो नारायणाय मन्त्र	६८
३.	ॐ रां रामाय नमः	७२
४.	ॐ हुं जानकीवल्भाय स्वाहा	७३
५.	राम-राम मन्त्र	७४
६.	भगवान् श्रीकृष्णके मन्त्र	७५
७.	ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा	७७
८.	ॐ क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा	७७
९.	बाल गोपालके अठारह मन्त्र	७८
१०.	ॐ गोकुलनाथाय नमः	७९
११.	भगवान् शिवके मन्त्र	८१
१२.	ॐ नमः शिवाय	८५
१३.	श्रीहनुमानजीके मन्त्र	८६
१४.	ॐ हं पवननन्द स्वाहा	८७

हरिः शरणम् मंत्र

(मन्त्र)

हरिः शरणम्

प्रतिदिन कमसे कम एक माला इस मन्त्रकी जप करना चाहिये।

(आराध्यदेव इष्ट)

भगवान् श्रीकृष्ण

(आरोग्यता प्राप्तिके लिये)

(भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार स्वलिखित अक्षरोंमें)

नित्य प्रार्थना हेतु पाँच श्लोक

कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने।
प्रणतक्लेशनाशाय गोविन्दाय नमो नमः॥ १

वन्दे नवघनश्यामं पीतकौशेयवाससम्।
सानन्दं सुन्दरं शुद्धं श्रीकृष्णं प्रकृतेः परम्॥ २

कृष्ण कृष्ण कृपालुस्त्वमगतीनां गतिर्भव।
संसारार्णवमग्नानामुद्धरस्व जनार्दन॥ ३

नाथ योनिसहस्रेषु येषु येषु व्रजाम्यहम्।
तेषु तेष्वचला भक्तिरच्युतास्तु सदा त्वयि॥ ४

मुकुन्द मूर्ध्ना प्रणिपत्य याचे
भवन्तमेकान्तमियन्तमर्थम्।
अविस्मृतिस्त्वच्चरणारविन्दे
भवे भवे मेऽस्तु भवत्प्रसादात्॥ ५॥

इन पाँच श्लोकोंसे नित्य प्रातःकाल प्रार्थना करनी चाहिये।

(भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार स्वलिखित अक्षरोंमें)

श्रीदेवी-चिन्तन
एवं
कुछ उपयोगी मन्त्र

वन्दना

[१]

जय अष्टादशभुजा दुर्गा

(राग सोरठ—ताल त्रिताल)

जय अष्टादशभुजाधारिणी प्रति कर प्रहरणधारिणि जय।
जय सर्वाङ्ग-आभरणधारिणि सुन्दर त्रिनयनधारिणि जय॥
जय सुविशाल सिंह-आरोहिणि राक्षसदल-संहारिणि जय।
जय भीषण भवभीति-निवारिणि निज-जन-संकटहारिणि जय॥
जय दुर्गे मोहार्णवतारिणि परम सुमङ्गलकारिणि जय॥

[२]

जययुक्त श्रीदेवी-अष्टोत्तर-सहस्त्रनाम

[श्रीदेवीजीके १००८ नाम]

(राग भैरवी—ताल कहरवा)

जय दुर्गे दुर्गतिनाशिनि जय।
जय मा कालविनाशिनि जय जय॥
जयति शैल पुत्री मा जय जय।
ब्रह्मचारिणी माता जय जय॥
जयति चन्द्रघण्टा मा जय जय।
जय कूष्माण्डा, स्कन्दजननि जय॥
जय मा कात्यायिनी जयति जय।
जयति कालरात्री मा जय जय॥
जयति महागौरी देवी जय।
जयति सिद्धदात्री मा जय जय॥

जय काली, जय तारा जय जय।
जय जगजननि षोडशी जय जय॥
जय भुवनेश्वरि माता जय जय।
जयति छिन्नमस्ता मा जय जय॥
जयति भैरवी देवी जय जय।
जय जय धूमावती जयति जय॥
जय बगला मातंगी जय जय।
जयति जयति मा कमला जय जय॥
जयति महाकाली मा जय जय।
जयति महालक्ष्मी मा जय जय॥
जय मा महासरस्वति जय जय।
उमा, रमा ब्रह्माणी जय जय॥
कौबेरी, वारुणी जयति जय।
जय कच्छपी, नारसिंही जय॥
जय मत्स्या, कौमारी जय जय।
जय वैष्णवी वासवी जय जय॥
जय माधव-मनवासिनि जय जय।
कीर्ति, अकीर्ति, क्षमा, करुणा जय॥
छाया, माया, तुष्टि, पुष्टि जय।
जयति कान्ति, जय भ्रान्ति, क्षान्ति जय॥
जयति बुद्धि, धृति-वृत्ति जयति जय।
जयति क्षुधा, तृष्णा, विद्या जय॥
जय निद्रा, तन्द्रा, अशान्ति जय।
जय लज्जा, सज्जा, श्रुति जय जय॥
जय स्मृति, परा-साधना जय जय।
जय श्रद्धा, मेधा, माला जय॥
जय श्री, भूमि, दया, मोदा जय।
मज्जा, वसा, त्वचा, नाडी जय॥
इच्छा, शक्ति, अशक्ति, शान्ति, जय।
परा, वैखरी, पश्यन्ती जय॥
मध्या, सत्यासत्या जय जय।
वाणी मधुरा परुषा जय जय॥

अष्टभुजा, दशभुजा जयति जय।
अष्टादश शुभ भुजा जयति जय॥
दुष्टदलनि बहुभुजा जयति जय।
चतुर्मुखा बहुमुखा जयति जय॥
जय दशवक्त्रा, दशपादा जय।
जय त्रिंशल्लोचना जयति जय॥
द्विभुजा चतुर्भुजा मा जय जय।
जय कदम्बमाला, चन्द्रा जय॥
जय प्रद्युम्नजननि देवी जय।
जय श्रीरार्णवसुते जयति जय॥
दारिद्र्यार्णव-शोषिणि जय जय।
सम्पति-वैभव-पोषिणि जय जय॥
दयामयी सुतहितकारिणि जय।
पद्मावती, मालती जय जय॥
भीष्मकराजसुता, धनदा जय।
विरजा, रजा, सुशीला जय जय॥
सकल सम्पदारूपा जय जय।
सदाप्रसन्ना, शान्तिमयी जय॥
श्रीपतिप्रिये, पद्मलोचनि जय।
हरिहियराजिनि, कान्तिमयी जय॥
जयति गिरिसुता, हैमवती जय।
परमेशानि महेशानी जय॥
जय शंकर-मनमोदिनि जय जय।
जय हरचित्तविनोदिनि जय जय॥
दक्ष-यज्ञ-नाशिनि, नित्या जय।
दक्षसुता, शुचि सती जयति जय॥
पर्णा, नित्य अपर्णा जय जय।
पार्वती, परमोदारा जय॥
भव-भामिनि जय भाविनि जय जय।
भवमोचनी, भवानी जय जय॥
जय श्वेताक्षसूत्रहस्ता जय।
वीणा-वादिनि; सुधा-स्त्रवा जय॥

शब्दब्रह्मस्वरूपिणि जय जय।
श्वेतपुष्पशोभिता जयति जय॥
श्वेताम्बरधारिणि, शुभ्रा जय।
जय कैकेयी, सुमित्रा जय जय॥
जय कौसल्या रामजननि जय।
जयति देवकी कृष्णजननि जय॥
जयति यशोदा नन्दगृहिणि जय।
अवनिसुता अघहारिणि जय जय॥
अग्निपरीक्षोत्तीर्णा जय जय।
रामविरह-अति-शीर्णा जय जय॥
रामभद्रप्रियभामिनि जय जय।
केवल पतिहित-सुखकामिनि जय॥
जनकराजनन्दिनी जयति जय।
मिथिला-अवधानन्दिनि जय जय॥
संसारार्णवतारिणि जय जय।
त्यागमयी जगतारिणि जय जय॥
रावणकुलविध्वंस-रता जय।
सतीशिरोमणि पतिव्रता जय॥
लव-कुश-जननि महाभागिनि जय।
राघवेन्द्रपद-अनुरागिनि जय॥
जयति रुक्मिणीदेवी जय जय।
जयति मित्रवृन्दा, भद्रा जय॥
जयति सत्यभामा, सत्या जय।
जाम्बवती, कालिन्दी जय जय॥
नाग्नजिती, लक्ष्मणा जयति जय।
अखिल विश्ववासिनि, विश्वा जय॥
अघ-गंजनि, भव-भंजिनि जय जय।
अजरा, जरा, स्पृहा, वाञ्छा जय॥
अजरामरा महासुखदा जय।
अजिता, जिता, जयन्ती जय जय॥
अतितन्द्रा, घोरा तन्द्रा जय।
अतिभयङ्करा, मनोहरा जय॥

अतिसुन्दरी घोररूपा जय।
अतुलनीय सौन्दर्या जय जय॥
अतुलपराक्रमशालिनि जय जय।
अदिती, दिती, किराततिनि जय जय॥
अन्ता, नित्य अनन्ता जय जय।
अबला, बला, अमूल्या जय जय॥
अभयवरद-मुद्रा-धारिणि जय।
अभ्यन्तरा, बहिःस्था जय जय॥
अमला, जयति अनुपमा जय जय।
अमित विक्रमा अपरा जय जय॥
अमृता, अतिशांकरी जयति जय।
आकर्षिणि आवेशिनि जय जय॥
आदिस्वरूपा, अभया जय जय।
आन्वीक्षिकी, त्रयीवार्ता जय॥
इन्द्र-अग्नि-सुर-धारिणि जय जय।
ईज्या, पूज्या, पूजा जय जय॥
उग्रकान्ति, दीप्ताभा जय जय।
उग्रा, उग्रप्रभावति जय जय॥
उन्मत्ता, अतिज्ञानमयी जय।
ऋद्धि, वृद्धि जय, विमला जय जय॥
एका, नित्य सर्वरूपा जय।
ओज-तेजपुञ्जा, तीक्ष्णा जय॥
ओजस्विनी, मनस्विनी, जय जय।
कदली, केलिप्रिया, क्रीडा जय॥
कलमञ्जीर-रञ्जिनी जय जय।
कल्याणी कल्याणमयी जय॥
कव्यरूपिणी, कुलिशाङ्गी जय।
कव्यस्था कव्यहा जयति जय॥
केशवनुता, केतकी जय जय।
कस्तूरी-तिलका, कुमुदा जय॥
कस्तूरी-रसलिप्ता जय जय।
कामचारिणी, कीर्तिमती जय॥

कामधेनु-नन्दिनि आर्या जय।
कामाख्या, कुलकामिनि जय जय॥
कामेश्वरी, कामरूपा जय।
कालदायिनी कलसंस्था जय॥
काली, भद्रकालिका जय जय।
कुलध्येया, कौलिनी जयति जय॥
कूटस्था, व्याकृतरूपा जय।
क्रूरा, शूरा, शर्वा जय जय॥
कृपा, कृपामयि, कमनीया जय।
कैशोरी, कुलवती जयति जय॥
क्षमा, शान्ति-संयुक्ता जय जय।
खर्परधारिणि, दिगम्बरा जय॥
गदिनि, शूलिनी, अरिनाशिनि जय।
गन्धेश्वरी, गोपिका जय जय॥
गीता, त्रिपथा, सीमा जय जय।
गुणरहिता, निजगुणान्विता जय॥
घोरतमा, तमहारिणि जय जय।
चञ्चलाक्षिणी, परमा जय जय॥
चक्ररूपिणी, चक्रा जय जय।
चटुला, चारुहासिनी जय जय॥
चण्ड-मुण्ड-नाशिनि मा जय जय।
चण्डी जय प्रचण्डिका जय जय॥
चतुर्वर्गदायिनि मा जय जय।
चन्द्रबाहुका, चन्द्रवती जय॥
चन्द्ररूपिणी, चर्वा जय जय।
चन्द्रा, चारुवेणि, चतुरा जय॥
चन्द्रानना, चन्द्रकान्ता जय।
चपला, चला, चञ्चला जय जय॥
चराचरेश्वरि, चरमा जय जय।
चित्ता, चिति, चिन्मयि, चित्रा जय॥
चिद्‌रूपा, चिरप्रज्ञा जय जय।
जगदम्बा जय, शक्तिमयी जय॥

जगद्धिता, जगपूज्या जय जय।
जगन्मयी, जितक्रोधा जय जय॥
जगविस्तारिणि, पञ्चप्रकृति जय।
जय झिंझिका, डामरी जय जय॥
जन-जन क्लेशनिवारिणि जय जय।
जन-मन-रञ्जिनि जयति जना जय॥
जयरूपा, जगपालिनि जय जय।
जयंकरी, जयदा, जाया जय॥
जय अखिलेश्वरि, आनन्दा जय।
जय अणिमा, गरिमा, लघिमा जय॥
जय उत्पला, उत्पलाक्षी जय।
जय जय एकाक्षरा जयति जय॥
जय ऐंकारी, ॐकारी जय।
जय ऋतुमती, कुण्डनिलया जय॥
जय कमनीय गुणाकक्षा जय।
जय कल्याणी, काम्या जय जय॥
जय कुमारि, सधवा, विधवा जय।
जय कूटस्था, पराऽपरा जय॥
जय कौशिकी, अम्बिका जय जय।
जय खट्वाङ्गधारिणी जय जय॥
जय गर्वापहारिणी जय जय।
जय गायत्री, सावित्री जय॥
जय गीर्वाणी, गौराङ्गी जय।
जय गुह्यातिगुह्य-गोप्त्री जय॥
जय गोदा, कुलतारिणि जय जय।
जय गोपालसुन्दरी जय जय॥
जय गोलोक-सुरभि, सुरमयि जय।
जय चम्पकवर्णा, चतुरा जय॥
जय चातका, चन्द्र-चूड़ा जय।
जय चेतना, अचेतनता जय॥
जय जय विन्ध्यनिवासिनि जय जय।
जय ज्येष्ठा, श्रेष्ठा, प्रेष्ठा जय॥

जय ज्वाला, जागृती जयति जय।
जय डाकिनि, शाकिनि, शोषिणि जय॥
जय तामसी, आसुरी जय जय।
जयति अनङ्गा, औषधि जय जय॥
जयति असिद्धसाधिनी जय जय।
जयति इडा, पिंगला जयति जय॥
जयति सुषुम्णा गान्धारी जय।
जयति उग्रतारा, तारिणि जय॥
जयति एकवीरा, एका जय।
जयति कपालिनि, करालिनी जय॥
जयति कामरहिता, कामिनि जय।
जय तुरीयपद-गामिनि जय जय॥
जयति ज्ञानबल-क्रियाशक्ति जय।
जयति तप्तकाञ्चनवर्णा जय॥
जयति दिव्य आभरणा जय जय।
जयति दुर्गतोद्धारिणि जय जय॥
जयति दुर्गमालोका जय जय।
जयति नन्दजा, नन्दा जय जय॥
जयति पाटलावती, प्रिया जय।
जयति भ्रामरी, भ्रमरी जय जय॥
जयति माधवी, मन्दा जय जय।
जयति मृगावति, महोत्पला जय॥
जयति विश्वकामा, विपुला जय।
जयति बृत्रनाशिनि, वरदे जय॥
जयति व्याप्ति अव्याप्ति आप्ति जय।
जयति शाम्भवी, जयति शिवा जय॥
जयति सर्गरहिता, सुमना जय।
जयति हेमवर्णा, स्फटिका जय॥
जय दुरत्यया, दुर्गमगा जय।
दुर्गम आत्मस्वरूपिणि जय जय॥
जय दुर्गमिती, दुर्गमता जय।
जय दुर्गापद्विनिवारिणि जय॥

जय धारणा, धारिणी जय जय।
जय धीश्वरी, वेदगर्भा जय॥
जय नन्दिता, वन्दिता जय जय।
जय निर्गुणा, निरञ्जिनि जय जय॥
जय प्रत्यक्षा जय गुप्ता जय।
जय प्रवाल शोभा, फलिनी जय॥
जय पातालवासिनी जय जय।
जय प्रीता, प्रियवादिनि जय जय॥
जय बहुला, विपुला, विषया जय।
जय वायसी बिराली जय जय॥
जय भीषण-भयवारिणि जय जय।
जय भुजंग-उरभाविनि जय जय॥
जय मोदिनि, मधुमालिनि जय जय।
जय भुजंग-वरशालिनि जय जय॥
जय भेरूण्डा, भिषम्बरा जय।
जय मणिद्वीपनिवासिनि जय जय॥
जय मधुमयि, मुकुन्दमोहिनि जय।
जय मधुरता मेदिनी जय जय॥
जय मन्मथा, महाभागा जय।
जयति महामारी, महिमा जय॥
जय माण्डवी महादेवी जय।
जय मृगनयनि, मञ्जुला जय जय॥
जय योगिनी, योगसिद्धा जय।
जय राक्षसी, दानवी जय जय॥
जय वत्सला, बालपोषिणि जय।
जय विश्वार्तिहारिणी जय जय॥
जय विश्वेश-वन्दनीया जय।
जयति शताक्षी, शाकम्भरि जय॥
जय शुभचण्डी, शिवचण्डी जय।
जय शोभना लोकपावनि जय॥
जय षष्टी, मङ्गलचण्डी जय।
जय संगीतकला-कुशला जय॥

जय संध्या, अघनाशिनि जय जय।
जय सच्चिदानन्दरूपा जय॥
जय सर्वाङ्गसुन्दरी जय जय।
जय सिंहिका, सत्यवादिनि जय॥
जय सौभाग्यशालिनी जय जय।
जय श्रींकारी, ह्रींकारी जय॥
जय हरप्रिया, हिमसुता जय जय।
जय हरिभक्तिप्रदायिनि जय जय॥
जय हरिप्रिया, जयति तुलसी जय।
जय हिरण्यवर्णा, हरिणी जय॥
जय कक्षा क्लींकारी जय जय।
जरावर्जिता, जरा, जयति जय॥
जितेन्द्रिया इन्द्रियरूपा जय।
जिह्वा, कुटिला, जम्भिनि जय जय॥
ज्योत्स्ना, ज्योति, जया, विजया जय।
ज्वलनि, ज्वालिनी, ज्वालाङ्गी जय॥
ज्वालामालिनि, धामनि जय जय।
ज्ञानानन्द-भैरवी जय जय॥
तपनि, तापनी, महारात्रि जय।
ताटङ्किनी तुषारा जय जय॥
तीव्रा, तीव्रवेगिनी जय जय।
त्रिगुणमयी, त्रिगुणातीता जय॥
त्रिपुरसुन्दरी, ललिता जय जय।
दण्डनीति जय, समरनीति जय॥
दानवदलनि, दुष्टमर्दिनि जय।
दिव्य वसनभूषणधारिणि जय॥
दीनवत्सला दुखहारिणि जय।
दीना, हीनदरिद्रा जय जय॥
दुराशया दुर्जया जयति जय।
दुर्गति, सुगति, सुरेश्वरि जय जय॥
दुर्गम-ध्यान-भासिनी जय जय।
दुर्गमेश्वरी, दुर्गमाङ्गि जय॥

दुर्लभ मोक्षप्रदात्री जय जय।
दुर्लभ सिद्धिदायिनी जय जय॥
देवदेव-हरि-मनभावनि जय।
देवमयी, देवेशी जय जय॥
देवयानि, दमयन्ती जय जय।
देवहूति, द्रौपदी जयति जय॥
धनजन्मा, धनदात्रि जयति जय।
धनमयि, द्रविणा, द्रवा जयति जय॥
धर्ममूर्ति जय ज्योतिमूर्ति जय।
धर्म-साधु-दुख-भीति-हरा जय॥
धूम्राक्षी, क्षीणा, पीना जय।
नवनीरदघनश्यामा जय जय॥
नवरत्नाढ्या, निरवद्या जय।
नव-षट्रस-आधारा जय जय॥
नाना-ऋतुमयि, ऋतुजननी जय।
नानाभोगविलासिनि जय जय॥
नारायणी, दिव्यनारी जय।
नित्यकिशोरवयस्का जय जय॥
निर्गन्धा, बहुगन्धा जय जय।
अगुणा, सर्वगुणाधारा जय॥
निर्दोषा, सबदोषयुता जय।
निर्वर्णा, अनेकवर्णा जय॥
निर्बीजा जय बीजकरी जय।
निष्कल-बिन्दु-नादरहिता जय॥
नीलाघना, सुकुल्या जय जय।
नीलाञ्जना, प्रभामयि जय जय॥
नीलाम्बरा नीलकमला जय।
नृत्य-वाद्यरसिका, भूमा जय॥
पञ्चशिखा, पञ्चाङ्गी जय जय।
पद्मप्रिया पद्मस्था जय जय॥
पयस्विनी, पृथुजंघा जय जय।
परंज्योति, पर-प्रीति नित्य जय॥

परम तपस्विनि, प्रमिला जय जय।
परमाह्लादकारिणी जय जय॥
परमेश्वरी, पाडला जय जय।
पर शृङ्गारवती शोभा जय॥
पल्लवोदरी, प्रणवा जय जय।
प्राणवाहिनी अलम्बुषा जय॥
पालिनि, जगसंवाहिनि जय जय।
पिङ्गलेश्वरी, प्रमदा जय जय॥
प्रियभाषिणी, पुरन्ध्रा जय जय।
पीताम्बरा, पीतकमला जय॥
पुण्यप्रजा पुण्यदात्री जय।
पुण्यालया सुपुण्या जय जय॥
पुरवासिनी, पुष्कला जय जय।
पुष्पगन्धिनी पूषा जय जय॥
पुष्पभूषणा, पुष्पप्रिया जय।
प्रेमसुगम्या, विश्वजिता जय॥
प्रौढ़ा अप्रौढ़ा, कन्या जय।
बला, बलाका, बेला जय जय॥
बालाकिनी, बिलाहारा जय।
बाला, तरुणि, वृद्धमाता जय॥
बुद्धिमयी, अति सरला जय जय।
ब्रह्मकला, विन्ध्येश्वरि जय जय॥
ब्रह्मस्वरूपा, विद्या जय जय।
ब्रह्माभेदस्वरूपिणि जय जय॥
भक्त-हृदय-तम-घन-हारिणि जय।
भक्तात्मा, भुवनानन्दा जय॥
भक्तानन्दकरी, वीरा जय।
भगात्मिका, भगमालिनि जय जय॥
भगरूपका भूतधात्री जय।
भगनीया, भवनस्था जय जय॥
भद्रकर्णिका, भद्रा जय जय।
भयप्रदा, भयहारिणि जय जय॥

भवक्लेशनाशिनि, धीरा जय।
भवभयहारिणि, सुखकारिणि जय॥
भवमोचनी, भवानी जय जय।
भव्या, भाव्या, भविता जय जय॥
भस्मावृता, भाविता जय जय।
भाग्यवती, भूतेशी जय जय॥
भानुभाषिणी, मधुजिह्वा जय।
भास्करकोटि, किरणमुक्ता जय॥
भीतिहरा, जय, भयंकरी जय।
भीषणशब्दोच्चारिणि जय जय॥
भूति, विभूति, विभवरूपिणि जय।
भूरिदक्षिणा, भाषा जय जय॥
भोगमयी, अति त्यागमयी जय।
भोगशक्ति जय, भोक्तृशक्ति जय॥
मत्तानना, मादिनी जय जय।
मदनोन्मादिनि संशोषिणि जय॥
मदोत्कटा मुकुटेश्वरि जय जय।
मधुपा, मात्रा, मित्रा जय जय॥
मधुमालिनि, बलशालिनि जय जय।
मधुरभाषिणी, घोररवा जय॥
मधुर-रसमयी, मुद्रा जय जय।
मनरूपा जय, मनोरमा जय॥
मनहर-मधुर-निनादिनि जय जय।
मन्दस्मिता, अट्टहासिनि जय॥
महासिद्धि जय, सत्यवाक जय।
महिषासुरमर्दिनि मा जय जय॥
मुग्धा, मधुरालापिनि जय जय।
मुण्डमालिनी, चामुण्डा जय॥
मूलप्रकृति, अनादि जयति जय।
मूलाधारा, प्रकृतिमयी जय॥
मृदु-अङ्गी, वज्राङ्गी जय जय।
मृदुमञ्जीरपदा रुचिरा जय॥

मृदुला, महामानवी जय जय।
मेघमालिनी, मैथिलि जय जय॥
युद्धनिवारिणि, निःशस्त्रा जय।
योगक्षेमसुवाहिनि जय जय॥
योगशक्ति जय, भोगशक्ति जय।
रक्तबीजनाशिनि मा जय जय॥
रक्ताम्बरा, रक्तदन्ता जय।
रक्ताम्बुजासना, रक्ता जय॥
रक्ताशना, रक्तवर्णा जय।
रजनी, अमा, पूर्णिमा जय जय॥
रतिप्रिया, रतिकरी, रीति जय।
रत्नवती, नरमुण्डप्रिया जय॥
रमाप्रकटकारिणि, राधा जय।
रमास्वरूपिणि रमाप्रिया जय॥
रतनोल्लसतकुण्डला जय जय।
रुद्रचन्द्रिका, घोरचण्डि जय॥
रुद्रसुन्दरी रतिप्रिया जय।
रुद्राणी, रम्भा, रमणा जय॥
रौद्रमुखी, विधुमुखी जयति जय।
लक्ष्यालक्ष्यस्वरूपा जय जय॥
ललिताम्बा, लीला, लतिका जय।
लीलावती, प्रेमललिता जय॥
विकटाक्षा, कपाटिका जय जय।
विकटानना, सुधाननि जय जय॥
विद्यापरा, महावाणी जय।
विद्युल्लता, कनकलतिका जय॥
विध्वंसिनि, जगपालिनि जय जय।
विन्दु-नादरूपिणी, कला जय॥
विन्दुमालिनी, पराशक्ति जय।
विमला, उत्कर्षिणि, वामा जय॥
विमुखा, सुमुखा, कुमुखा जय जय।
विश्वमूर्ति विश्वेश्वरि जय जय॥

विश्व-प्राज्ञ-तैजसरूपा जय।
विश्वेश्वरी, विश्वजननी जय॥
विष्णुस्वरूपा, वसुन्धरा जय।
वेदमूर्ति जय, ज्ञानमूर्ति जय॥
शङ्खिनि, चक्रिणि, वज्रिणि जय जय।
शबल-ब्रह्मरूपिणि, अमरा जय॥
शब्दमयी, शब्दातीता जय।
शर्वाणी, व्रजरानी जय जय॥
शशिशेखरा, शशाङ्कमुखी जय।
शस्त्रधारिणी, रणाङ्गिणी जय॥
शालग्रामप्रिया शान्ता जय।
शास्त्रमयी, सर्वास्त्रमयी जय॥
शुम्भ-निशुम्भ-विघातिनि जय जय।
शुद्धसत्त्वरूपा माता जय॥
शोभावती, शुभाचारा जय।
षट्चक्रा, कुण्डलिनी जय जय॥
संवित, चिति, नित्यानन्दा जय।
सकल-कलुष-कलिकालहरा जय॥
सत्-चित्-सुख-स्वरूपिणी जय जय।
सत्यवादिनी, सन्मार्गा जय॥
सत्या, सत्याधारा जय जय।
सत्ता, सत्यानन्दमयी जय॥
सर्गस्थिता सर्गरूपा जय।
सर्वज्ञा, सर्वातीता जय॥
सर्वतापहारिणि जय मा जय।
सर्वमङ्गला, मनसा जय जय॥
सर्वबीजस्वरूपिणि जय जय।
सर्वसुमङ्गलरूपिणि जय जय॥
सर्वासुरनाशिनि, सत्या जय।
सर्वाह्लादनकारिणि जय जय॥
सर्वेश्वरी, सर्वजननी जय।
सर्वैश्वर्यप्रिया, शरभा जय॥

सामनीति जय, दामनीति जय।
साम्यावस्थात्मिका जयति जय॥
हंसवाहिनी, ह्रींरूपा जय।
हस्तिजिह्विका, प्राणवहा जय॥
हिंसा-क्रोधवर्जिता जय जय।
अति-विशुद्ध-अनुरागमना जय॥
कल्पद्रुमा, कुरङ्गाक्षी जय।
कारुण्यामृत-अम्बुधि जय जय॥
कुञ्जविहारिणि देवी जय जय।
कुन्दकुसुमदन्ता गोपी जय॥
कृष्णउरस्थलवासिनि जय जय।
कृष्ण-जीवनाधारा जय जय॥
कृष्णप्रिया, कृष्णकान्ता जय।
कृष्णप्रेमकलङ्किनि जय जय॥
कृष्णप्रेमतरंगिणि जय जय।
कृष्णप्रेमप्रदायिनि जय जय॥
कृष्णप्रेमरूपिणि मत्ता जय।
कृष्णप्रेमसागर-सफरी जय॥
कृष्णवन्दिता, कृष्णमयी जय।
कृष्णवक्षनितशायिनि जय जय॥
कृष्णानन्दप्रकाशिनि जय जय।
कृष्णाराध्या, कृष्णमुखी जय॥
कृष्णह्लादिनि, कृष्णप्रिया जय।
कृष्णोन्मादिनि देवी जय जय॥
गुणसागरी, नागरी जय जय।
गोपी-उन्मादिनि मादिनि जय॥
गोपीकायव्यूहरूपा जय।
जय आह्लादिनि, संधिनि जय जय॥
जय कलिकलुषविनाशिनि जय जय।
जय कीर्तिदा-भानुनन्दिनि जय॥
जय गोकुलानन्ददायिनि जय।
जय गोपालवल्लभा जय जय॥
जय चन्द्रावलि, ललिनी जय जय।

जयति कामरहिता, रामा जय॥
जयति विशाखा, शीला जय जय।
जयति श्याम-मोहिनि, श्यामा जय॥
जय ललिता, नलिनाक्षी जय जय।
जय रससुधा, सुशीला जय जय॥
जय कृष्णाङ्गरता देवी जय।
दिव्यरूपसम्पन्ना जय जय॥
दुर्लभ महाभावरूपा जय।
नागर, मनोमोहिनी जय जय॥
नित्य कृष्णसंजीवनि जय जय।
नित्य निकुञ्जेश्वरि, पूर्णा जय॥
प्रणय-राग-अनुरागमयी जय।
फुल्लपङ्कजानना जयति जय॥
प्रियवियोग-मनभग्ना जय जय।
श्यामसुधारसमग्ना जय जय॥
भुक्ति-मुक्ति-भ्रम-भङ्गिनि जय जय।
भुक्ति-मुक्ति-सम्पादिनि जय जय॥
भुजमृणालिका, शुभा जयति जय।
मदनमोहिनी, मुख्या जय जय॥
मन्मथ-मन्मथ-मनमोहनि जय।
जय मुकुन्द-मधुमाधुर्या जय॥
मुकुररञ्जिनी मानिनि जय जय।
मुखरा, मौना, मानवती जय॥
जय रङ्गिणि, रसवृन्दा जय जय।
रसदायिनी, रसमयी जय जय॥
रसमञ्जरी, रसज्ञा जय जय।
रासमण्डलाध्यक्षा जय जय॥
रासरसोन्मादी, रसिका जय।
रासविलासिनि, रासेश्वरि जय॥
रासोल्लासप्रमत्ता जय जय।
लावण्यामृत-रसनिधि जय जय॥
लीलामयि, लीलारङ्गी जय।
लोलाक्षी, ललिताङ्गी जय जय॥
वंशीवाद्यप्रिया देवी जय।
विश्वविमोहिनि, मुनिमोहनि जय॥
व्रजरस-भाव-राज्य-भूपा जय।

व्रजलक्ष्मी-वल्लवी जयति जय॥
व्रजेन्दिरा, विद्युद्-गौरी जय।
श्रीव्रजेन्द्रसुत-प्रिया जयति जय॥
श्यामप्रीतिसंलग्ना जय जय।
श्यामामृत-रसमग्ना जय जय॥
हरि-उल्लासिनि, हरि-स्मृतिमयि जय।
हरि-हिय-हारिणि, हरि-रतिमयि जय॥
गङ्गा, यमुना, सरस्वती जय।
कृष्णा, सरयु, देविका जय जय॥
अलकनन्दिनी, अमला जय जय।
जय कौशिकी, चन्द्रभागा जय॥
जय गण्डकी, तापिनी जय जय।
जयति गोमती, गोदावरि जय॥
जयति वितस्ता, साभ्रमती जय।
जयति विपाशा, तोया जय जय॥
जय शतद्रु, कावेरी जय जय।
वेत्रवती, नर्मदा जयति जय॥
स्नेहमयी सौम्या मैया जय।
जय जननी जय जयति-जयति जय॥*

****

[३]

महिषमर्दिनी दशभुजा दुर्गा

(राग देश—ताल मूल)

लिएँ हाथ असि, चक्र, गदा घन, परसु, धनुषबर।
सूल, बज्र, दृढ़ पास, कमंडलु, घंटा रवकर॥
ज्योतिर्मय अतिसय उज्ज्वल सुभ नेत्रत्रय-धर।
कुंडल सोभित स्त्रवन, सुकंकन सज्जित सब कर॥
कंठ हार-मनि-सुमन, सिंहपर रहीं विराजित।
महिषमर्दिनी दुर्गा माँ दसभुजा सु-राजत॥

[४]

दुर्गाकी कृपा

(राग पीलू—ताल कहरवा)

दुर्गा दुर्गा रटत ही सब संकट कटि जाय।
दुर्गा जननी सुत सदृश संतत करै सहाय॥

[५]

माता सारिका देवी

(राग आसावरी—ताल कहरवा)

खड्ग परशु, खट्वांग, गदा, अंकुश, त्रिशूल वर।
डमरु, पाश, पुस्तक, तोमर, मूसल, शुभ मुग्दर॥
चक्र, वाण, शुचि धनुष, अभय-वर-मुद्रा धारण।
नर-कपाल अष्टादशभुज शशि-शिर शुभ कारण॥
शोभित आभूषण-वसन अङ्ग-अङ्ग अति द्युति बिमल।
सकल सुमङ्गल-मूल मृदु मातु सारिका-पद-कमल॥

[६]

संतान-सुंदरी माताकी जय

(राग पीलू—ताल कहरवा)

भानु-सहस्त्र-सदृश अति आभा, शशिशेखर, त्रिनेत्र संयुक्त !
रक्तवसनयुत, रत्नविभूषण, अमित इन्दुज्योत्स्नासे युक्त॥
धारण कर स्वपाणिसे सादर पिला रही स्तन-सुधा अपार।
जय वर-अभयदायिनी जय संतान-सुन्दरी स्नेहागार॥

[७]

श्रीहंसवाहिनी

(राग आनन्द—ताल त्रिताल)

कान्ति धवल कर्पूरकुन्द-सम पूर्ण-चन्द्र-उज्ज्वल आनन।
वीणा पुस्तक-माला-धारिणि, परम सुशोभित दिव्य वसन॥
षोडशदल-कमलासन सुन्दर हंसवाहिनी कल्याणी।
तम-नाशिनि सद्बुद्धि-प्रदायिनि जय-जय जयति देवि वाणी॥

[८]

प्रसिद्ध छः देवी माताओंकी जय।

(राग तोड़ी—ताल त्रिताल)

विद्यादायिनि 'सरस्वती' जय, श्री-विभूतिदा 'लक्ष्मी' जय।
'ललिताम्बा' कल्याणकरी जय, 'दुर्गा' दुर्गतिनाशिनि जय॥
मुक्तिदायिनी 'गायत्री' जय, 'काली' कलुषनिकन्दिनि जय।
जय प्रसिद्ध षड्रूपा माता, दुःख-शोक-भयहारिणि जय॥

[९]

जय श्रीललिताम्बा

(राग भैरवी—ताल त्रिताल)

रक्त वर्ण, रक्ताम्बर राजत, रम्य कण्ठ मुक्ता-मणि हार।
अङ्कुश-पाश-बाण-धनु शोभित चारु भुजा भूषणयुत चार॥
हेम मुकुट रत्नावलि मण्डित, तिलक भाल मारण मद मार।
कुण्डल कर्ण, कमल-दल-लोचन ललिताम्बा जय जय सुखसार॥

[१०]

भगवती गौरी देवी

(राग काफी—ताल मूल)

गौरारुण शुभ वर्ण मुकुट सिर रत्न विराजित।
नील वसन, गल रत्न-कुसुम हारावलि राजित॥
शूल-बाण-धनु-परशु हस्त, भुजबन्ध सुराजित।
कटि काञ्ची, सुक्कणित रणित पग नूपुर भ्राजित॥
तेज-पुंज तन, तीन नेत्र उज्ज्वल सुषमा मय।
हर-प्रिया हिम-गिरि-वासिनी मा गौरी ! जय जय॥

[११]

जगज्जननी अन्नपूर्णा

(राग ईमन-ध्वनि कीर्तन—ताल कहरवा)

जय भव-भामिनि जय भव-तोषिणि जय जग-पोषिणि जननी जय।
जय मधुमालिनि जय जग-पालिनि वैभवशालिनि जननी जय॥
जय सुख-दायिनि वाञ्छित-दायिनि, मङ्गलदायिनि जननी जय।
जय अघ-नाशिनि विघ्न-विनाशिनि अन्नपूर्णा जननी जय॥

[१२]

वरदायिनी श्रीलक्ष्मीमाता

(राग देश—ताल मूल)

जय अनन्त वैभवमयि, जय दारिद्र्य-बिदारिणि।
जय अनन्त ऐश्वर्यखानि, हरि-हृदय-विहारिणि॥
जयति देव-दानव-मानव सब दुःख-निवारिणि।
जय वरदायिनि माता लक्ष्मी मङ्गलकारिणि॥
अरुणाभा अरुणाम्बरा दिव्यभूषणा जयति जय।
कमलकरा कमलासना द्युतमति कमला जयति जय॥

[१३]

भगवती श्री (महालक्ष्मी) की झाँकी

(राग बिहाग—ताल त्रिताल)

कमलासन-आसीन देवि 'श्री' अद्भुत श्री-सुषमासे युक्त।
पद्म-चक्र-वर-अभय चतुर्भुज दिव्य भूषणोंसे संयुक्त॥
सुमन-माल गल, रत्न-मुकुट सिर, सकल विभूति विश्वकी टेक।

चारु स्वर्णकलशोंसे करिवर चार कर रहे शुभ अभिषेक॥

[१४]

शिव-गौरी

(राग पीलू—ताल कहरवा)

कालीसे गौरी हुई तजकर काली-चाम।
त्वक्से प्रकटी कौशिकी शक्ति-शौर्य-बल धाम॥
आ पहुँची देवी तुरत गौरी शिवके पास।
छायी परम प्रसन्नता शिव-मन परमोल्लास॥
गौरीका शिवने किया निज कर शुचि शृङ्गार।
लगा रहे अब भालपर बेदी भव-भर्तार॥

[१५]

लक्ष्मीनारायण, लक्ष्मी, सरस्वती

(राग भैरव—ताल धमार)

शक्ति-शक्तिधर श्रीलक्ष्मी-नारायण दें मङ्गल वरदान।
मिटें अशान्ति-दुःख सबहीके, प्राप्त करें सुख-शान्ति महान॥
माँ लक्ष्मी कर कृपा हरें दारिद्र्य, करें सौभाग्य-प्रदान।
माँ सरस्वती दें शुचि विद्या-बुद्धि हरें सारा अज्ञान॥

[१६]

लक्ष्मीद्वारा श्रीहरिका वरण

[राग ईमन]

देव-दानवोंने मथा मिलकर उदधि अपार।
निकला विष, जलने लगा उससे सब संसार॥
विकल देख जग, पी गये शंकर करुणागार।
मन्थन करने लगे फिर, कर सब जय-जयकार॥
निकले रत्न विविध, हुआ श्रीका आविर्भाव।
दिव्य वसन-भूषण सजे, मनमें अतिशय चाव॥
जा पहुँची हरिके निकट, हाथ लिये वरमाल।
वरा नित्य पतिको पुनः लक्ष्मी हुई निहाल॥

[१७]

आरती श्रीदुर्गाजी

(ध्वनि आरती)

जगजननी जय! जय!! मा! जगजननी जय! जय!!
भयहारिणि, भवतारिणि, भवभामिनि जय जय॥ टेक॥
तू ही सत-चित-सुखमय शुद्ध ब्रह्मरूपा।
सत्य सनातन सुन्दर पर-शिव सुर-भूपा॥ १॥ जग०
आदि अनादि अनामय अविचल अविनाशी।
अमल अनन्त अगोचर अज आनँदराशी॥ २ ॥ जग०
अविकारी, अघहारी, अकल, कलाधारी।
कर्ता विधि, भर्ता हरि, हर सँहारकारी॥ ३ ॥ जग०
तू विधि वधू, रमा, तू उमा, महामाया।
मूल प्रकृति, विद्या तू, तू जननी, जाया॥ ४॥ जग०
राम, कृष्ण तू, सीता, व्रजरानी राधा।
तू वाञ्छाकल्पद्रुम, हारिणि सब बाधा॥ ५ ॥ जग०
दश विद्या, नव दुर्गा, नाना शस्त्रकरा।
अष्टमातृका, योगिनि, नव-नव-रूप-धरा॥ ६ ॥ जग०
तू परधामनिवासिनि, महाविलासिनि तू।
तू ही श्मशानविहारिणि, ताण्डव-लासिनि तू॥ ७ ॥ जग०
सुर-मुनि-मोहिनि सौम्या तू शोभाधारा।
विवसन विकट-सरूपा, प्रलयमयी धारा॥ ८ ॥ जग०
तू ही स्नेहसुधामयी, तू अति गरलमना।
रत्नविभूषित तू ही, तू ही अस्थि-तना॥ ९॥ जग०
मूलाधारनिवासिनि, इह-पर-सिद्धिप्रदे।
कालातीता काली, कमला तू वरदे॥ १० ॥ जग०
शक्ति शक्तिधर तू ही, नित्य अभेदमयी।
भेदप्रदर्शिनि वाणी विमले! वेदत्रयी॥ ११ ॥ जग०
हम अति दीन दुखी माँ! विपत-जाल घेरे।
हैं कपूत अति कपटी, पर बालक तेरे॥ १२ ॥ जग०
निज स्वभाववश जननी! दयादृष्टि कीजै।
करुणा कर करुणामयि! चरण-शरण दीजै॥ १३ ॥ जग०

[१८]

आरती गायत्रीजी

(तर्ज आरती—ताल कहरवा)

आरति श्री गायत्रीजी की।
स्मितवदना सावित्रीजी की॥

यज्ञप्रिया यज्ञमयि वाणी।
लक्ष्मी वेदजननि ब्रह्माणी।
वृषभासना रुचिर रुद्राणी।

मङ्गलमयी परम सुश्री की।
आरति श्री गायत्रीजी की॥

सकल वेदमन्त्रोंकी स्वामिनि।
सुर-सेविता सुमङ्गल-धामिनि॥
शीतल नित्य दीप्तिमयि दामिनि।

तम हारिणि विशुद्धतम धी की।
आरति श्री गायत्रीजी की॥

दुःख-दुरित-दारिद्र्य-विनाशिनि।
सुख-शुभ-सुकृति-विभूति-विकासिनि।
सतत सच्चिदानन्द-विलासिनि।

नाशिनि महामोह-रजनी की।
आरति श्री गायत्रीजी की॥

विश्व-जननि मा विश्वाधारा।
पावन स्नेह-सुधा की धारा।
तुरत बहाकर करुणागारा।

दूर करो सब ज्वाला जी की।
आरति श्री गायत्रीजी की॥

[१९]

आरती श्रीगायत्रीजी—२

(तर्ज आरती—ताल कहरवा)

गायत्री माता, जय गायत्री माता।
वेदजननि, वेदात्मा, विद्या विख्याता॥
रक्तवर्ण शुभ प्रातः ब्रह्मा रूपधरा।

हंसारूढ़ा भुज-मुख-चार चारु अपरा॥
मध्याह्ने हरि-रूपा नीलवर्ण शुभदा।
गरुड़वाहिनी चतुरा चतुर्बाहु सुखदा॥
सार्था बृषभारूढ़ा शिवरूपा श्वेता।
सूर्यकोटिसम आभा चतुर्भुजोपेता॥
पञ्चमुखा दशहस्ता शुचि रस-रस-नयना।
स्फटिक समुज्ज्वलवर्णा कल करुणा-अयना॥
अघहारिणि, भवतारिणि-सुखकारिणि परमा।
ब्रह्माणी, रुद्राणी, शुभलक्षणा रमा॥
दुरित दुःख-दुर्गति सब दुर्मति दूर करो।
शुचितम मम उरमें मा विमला भक्ति भरो॥

****

(४)

श्रीदुर्गा-सप्तशतीके कुछ सिद्ध सम्पुट-मन्त्र

श्रीमार्कण्डेयपुराणान्तर्गत देवीमाहात्म्यमें 'श्लोक' 'अर्ध श्लोक' और 'उवाच' आदि मिलाकर ७०० मन्त्र हैं। यह माहात्म्य दुर्गासप्तशतीके नामसे प्रसिद्ध है। सप्तशती अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष—चारों पुरुषार्थोंको प्रदान करनेवाली है। जो पुरुष जिस भाव और जिस कामनासे श्रद्धा एवं विधिके साथ सप्तशतीका पारायण करता है, उसे उसी भावना और कामनाके अनुसार निश्चय ही फल-सिद्धि होती है। इस बातका अनुभव अगणित पुरुषोंको प्रत्यक्ष हो चुका है। यहाँ हम कुछ ऐसे चुने हुए मन्त्रोंका उल्लेख करते हैं, जिनका सम्पुट देकर विधिवत् पारायण करनेसे विभिन्न पुरुषार्थोंकी व्यक्तिगत और सामूहिकरूपसे सिद्धि होती है। इनमें अधिकांश सप्तशतीके ही मन्त्र हैं और कुछ बाहरके भी हैं—

(१) सामूहिक कल्याणके लिये

देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या
निश्शेषदेवगणशक्तिसमूहमूर्त्या ।
तामम्बिकामखिलदेवमहर्षिपूज्यां
भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः॥

(२) विश्वके अशुभ तथा भयका विनाश करनेके लिये

यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो
ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च।
सा चण्डिकाखिलजगत्परिपालनाय
नाशाय चाशुभभयस्य मतिं करोतु॥

(३) विश्वकी रक्षाके लिये

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम्॥

(४) विश्वके अभ्युदयके लिये

विश्वेश्वरि त्वं परिपासि विश्वं
विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम्।
विश्वेशवन्द्या भवती भवन्ति
विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः॥

(५) विश्वव्यापी विपत्तियोंके नाशके लिये

देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद
प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं
त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य॥

(६) विश्वके पाप-ताप-निवारणके लिये

देवि प्रसीद परिपालय
नोऽरिभीतेर्नित्यं यथासुरवधादधुनैव सद्यः।
पापानि सर्वजगतां प्रशमं नयाशु
उत्पातपाकजनितांश्च महोपसर्गान्॥

(७) विपत्तिनाशके लिये

शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते॥

(८) विपत्ति-नाश और शुभकी प्राप्तिके लिये

करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः।

(९) भयनाशके लिये

(क) सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते॥

(ख) एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम्।
पातु नः सर्वभीतिभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तु ते॥

(ग) ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम्।
त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते॥

(१०) पापनाशके लिये

हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत्।
सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव॥

(११) रोग-नाशके लिये

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा रुष्टा
तु कामान् सकलानभीष्टान्।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां
त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति॥

(१२) महामारी-नाशके लिये

जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते॥

(१३) आरोग्य और सौभाग्यकी प्राप्तिके लिये

देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम्।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥

(१४) सुलक्षणा पत्नीकी प्राप्तिके लिये

पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम्।
तारिणीं दुर्गसंसारसागरस्य कुलोद्भवाम्॥

(१५) बाधा-शान्तिके लिये

सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम्॥

(१६) सर्वविध अभ्युदयके लिये

ते सम्मता जनपदेषु धनानि तेषां
तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः।
धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा
येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना॥

(१७) दारिद्र्यदुःखादिनाशके लिये

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या

सर्वोपकारकरणाय सदाऽऽर्द्रचित्ता॥

(१८) रक्षा पानेके लिये

शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च॥

(१९) समस्त विद्याओंकी और समस्त स्त्रियोंमें मातृभावकी प्राप्तिके लिये

विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः
स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत् का
ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः॥

(२०) सब प्रकारके कल्याणके लिये

सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते॥

(२१) शक्ति-प्राप्तिके लिये

सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तिभूते सनातनि।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तु ते॥

(२२) प्रसन्नताकी प्राप्तिके लिये

प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणि।
त्रैलोक्यवासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव॥

(२३) विविध उपद्रवोंसे बचनेके लिये

रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा
यत्रारयो दस्युबलानि यत्र।
दावानलो यत्र तथाब्धिमध्ये तत्र
स्थिता त्वं परिपासि विश्वम्॥

(२४) बाधामुक्त होकर धन-पुत्रादिकी प्राप्तिके लिये

सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो धनधान्यसुतान्वितः।
मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः॥

(२५) भुक्ति-मुक्तिकी प्राप्तिके लिये

विधेहि देवि कल्याणं विधेहि परमां श्रियम्।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥

(२६) *पापनाश तथा भक्तिकी प्राप्तिके लिये*

नतेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके दुरितापहे।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥

(२७) *स्वर्ग और मोक्षकी प्राप्तिके लिये*

सर्वभूता यदा देवि स्वर्गमुक्तिप्रदायिनी।
त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः॥

(२८) *स्वर्ग और मुक्तिके लिये*

सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि संस्थिते।
स्वर्गापवर्गदे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते॥

(२९) *मोक्षकी प्राप्तिके लिये*

त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या
विश्वस्य बीजं परमासि माया।
सम्मोहितं देवि समस्तमेतत्
त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः॥

(३०) *स्वप्नमें सिद्धि-असिद्धि जाननेके लिये*

दुर्गे देवि नमस्तुभ्यं सर्वकामार्थसाधिके।
मम सिद्धिमसिद्धिं वा स्वप्ने सर्वं प्रदर्शय॥

****

(५)

शक्ति-उपासनाका तात्पर्य

आदिसङ्कल्प

परात्पर ब्रह्मका आदिसङ्कल्प '**एकोऽहं बहुस्याम्**' (एक हूँ, अनेक हो जाऊँ), जो सृष्टिकी उत्पत्तिका मूल कारण है, वही आद्या-शक्ति है। इस शक्तिके प्रकृति-भागका मुख्य कार्य ब्रह्मको अनेक रूपोंमें प्रकाशित करनेके निमित्त प्रथम उपयुक्त उपाधियाँ प्रस्तुत करना है। उपयुक्त उपाधि अर्थात् मनुष्य शरीरके प्रस्तुत होनेपर पराशक्तिके शुद्ध चैतन्य भागद्वारा ब्रह्मको अनेक अंशोंमें विभक्त कर उन उपाधियोंमें प्रविष्ट करवाना है। उसके पश्चात् सर्गका मुख्य कार्य उन उपाधियोंके रजोगुण-तमोगुण-भावको शुद्ध सात्त्विकमें परिवर्तितकर ऐसा स्वच्छ, निर्मल, शुद्ध बना देना है, जिसमें ब्रह्मके दिव्य गुण, सामर्थ्य, ऐश्वर्य, विभूति आदि जो प्रत्येक जीवात्मामें बीज-रूपमें निहित (गुप्त) हैं, उनका पराशक्तिके आश्रयसे विकास हो और फिर उसके द्वारा जीव और ब्रह्ममें सम्बन्ध स्थापित हो। यह सम्बन्ध शक्तिद्वारा स्थापित होता है। यही सृष्टिका उद्देश्य है जिसको आद्या-शक्ति नाना रूपोंके द्वारा पूरा कर रही हैं। इसीके निमित्त आद्या-शक्तिने वेदको प्रकाशित किया, जिसके कारण उनका वेदमाता गायत्री नाम हुआ। सशक्ति ब्रह्मके ही नाम महेश्वर, महाविष्णु, परमेश्वर आदि हैं। इस आद्या-शक्तिके द्वारा ही, जिसको पराशक्ति भी कहते हैं, ब्रह्माण्डमें तृणसे लेकर त्रिदेवपर्यन्त उद्भव हुए हैं और इसी आद्या-शक्तिकी शक्ति सबके अन्दर पायी जाती है। इसी कारण यह शक्ति ही यथार्थ जगन्माता है।

दो शक्तियाँ

सृष्टिके उद्‌भव, स्थिति, पालन, विकास आदिके निमित्त दो शक्तियोंकी आवश्यकता है; क्योंकि किसी तरहका विकास बिना आधार-आधेय, जड-चेतन, अथवा शरीर-शरीरी आदि द्वन्द्वके सम्भव नहीं। इसी कारण सृष्टि उद्‌भवके लिये आद्या-शक्तिका दूसरा रूपान्तर मूलप्रकृति है। यह भी अनादि है और साम्यावस्थामें दिव्य ही है। जिस तहर पराशक्ति सत्, चित्, आनन्द, विद्या आदि दिव्य गुणोंसे सम्पन्न है, उसी प्रकार मूल प्रकृति विकृत होनेपर उन गुणोंके विरुद्ध असत् (माया), अचित् (जड), दुःख-योनि, अविद्या आदि गुणवाली है। मूलप्रकृति आधार होनेके लिये ब्रह्मका आवरण बन गयी, जिसके बिना दृश्यका प्रादुर्भाव सम्भव नहीं था।

अतएव यह अविद्या है और पराशक्ति स्वयं ब्रह्मका प्रकाश होनेके कारण महाविद्या है। श्रीदेवीभागवतमें इस अवस्थाका वर्णन इस प्रकार है—

चैतन्यस्य न दृश्यत्वं दृश्यत्वे जडमेव तत्।
स्वप्रकाश्च चैतन्यं न परेण प्रकाशितम्॥

(१२।७।३२)

दो विरुद्ध गुणवाले पदार्थोंके एकत्र हुए बिना कोई विकास नहीं हो सकता, जैसे फोटोग्राफका चित्र प्रकाश और तमके संयोगसे तैयार होता है। अतएव दोनों शक्तियाँ आवश्यक हैं। इस कारण आधार-शक्तिकी भी सृष्टिमें और साधन-पथमें आवश्यकता तथा उपयोगिता है। ये दोनों शक्तियाँ ब्रह्मके ही विकास होनेके कारण मूलप्रकृतिकी दृष्टिसे अभिन्न हैं, मूलप्रकृति भी साम्यावस्थामें अनादि और अव्यय है, किन्तु जब सृष्टिके उद्भवके निमित्त पराशक्ति इसमें क्षोभ उत्पन्नकर इसको त्रिगुणात्मिका बना देती हैं। तो यह अविद्या होकर ब्रह्मको आच्छादित कर लेती है। त्रिगुणात्मिका अविद्या बनकर यह सृष्टिके उद्भव, स्थिति और लयके कार्यमें प्रवृत्त होती है।

पराशक्ति

यह ब्रह्मकी सत्ता और महाचैतन्य होनेके कारण ब्रह्मसे सदा अभिन्न हैं। ब्रह्मका ज्ञान करानेवाली, उनके साथ सम्बन्ध स्थापित करानेवाली और उनके सच्चिदानन्दभावको प्रकट करनेवाली यही परा शक्ति हैं; अन्यथा न तो कोई अप्रमेय, अज्ञात, अज्ञेय ब्रह्मको जान सकता और न पा सकता है। देव, पितृ, ऋषि, रुद्र, वसु, मनु, सनकादि आदि चराचर विश्व, यहाँतक कि ब्रह्माण्डके अधिनायक त्रिदेवतकका विकास इन्हीं पराशक्तिके द्वारा हुआ है; इन्हींके द्वारा वे स्थित हैं और इन्हींकी शक्ति, ज्ञान, बलके द्वारा वे सब-के-सब कार्य करते हैं, अन्यथा स्वयं कोई कुछ नहीं कर सकता। केनोपनिषद्की कथा प्रसिद्ध है। श्रीदेवीभागवतमें इस विषयमें ऐसा कथन है—

न विष्णुर्न हरः शक्तो न ब्रह्मा न च पावकः।
न सूर्यो वरुणः शक्ताः स्वे स्वे कार्ये कथञ्चन।
तया युक्ता हि कुर्वन्ति स्वानि कार्याणि ते सुराः॥

(१।८।३९)

इसीलिये भिन्न-भिन्न प्रधान देवोंकी अपनी-अपनी गायत्री है।

विश्वमें व्यक्तभावमें जितने नाम-रूपात्मक अथवा अन्तरिक्षमें जितने अनाम और अरूपात्मक विकास हैं और जहाँ कहीं भी जो कुछ क्रिया हो रही है वे सब केवल ब्रह्मकी शक्तिके कार्य हैं अथवा यों कहिये कि ब्रह्म भी शक्ति ही है, जैसा कि श्रीदेवीभागवतका वचन है—

एवं सर्वगता शक्तिः सा ब्रह्मेति विविच्यते।

(१।८।३४)

केवल शक्तिद्वारा ही ब्रह्म व्यक्त अथवा ज्ञात होते हैं, अन्यथा कदापि नहीं। इसी कारण श्रीशक्तिने प्रकट होकर यथार्थ ज्ञान देवताओंके सामने प्रकाशित किया। यही कारण है कि ब्रह्मकी प्राप्तिके लिये वेदने केवल गायत्रीकी उपासनाको ही एकमात्र उपाय बताया है। इसी सिद्धान्तके अनुसार ब्रह्मके अन्य रूप विष्णु, शिव, राम, कृष्ण आदिकी प्राप्ति उनकी शक्ति लक्ष्मी, दुर्गा, सीता, राधा आदिके सम्बन्ध और कृपाकी प्राप्तिके बिना हो नहीं सकती। सारांश यह है कि यह दृश्य और अदृश्य जगत्, चींटीसे लेकर ब्रह्मापर्यन्त इसी पराशक्तिके द्वारा सञ्चालित हो रहा है और सब-के-सब उसी शक्तिके रूपान्तरमात्र हैं।

आधार-शक्तिकी उपयोगिता

ब्रह्मके नाना रूपोंमें प्रकट होनेके निमित्त उपयुक्त आधारके बननेका कार्य स्थावर—जैसे पर्वत, वृक्ष आदिसे आरम्भ होकर सरीसृप, पक्षी और पशु-योनितक होता रहता है। स्थावरमें प्रकृतिका तमोगुण भाव प्रधान है, किन्तु पशुमें प्रकृतिके रजोगुण-भावद्वारा तमको दमन करनेके लिये रज-शक्ति प्रधान हुई। अतएव पशुमें मुख्यतया आहार, भय, मैथुन, हिंसा, काम, क्रोध आदि रजोगुणके कार्य प्रबल हैं, जिनके द्वारा तमोगुणका निग्रह होता है। इसी कारण इन्हींको लेकर पशुका जीवन है। पशुमें तम दब जाता है; किंतु निद्रा, आलस्य आदिके रूपमें किसी परिमाणमें वह वर्तमान रहता है। सत्त्वगुणके कार्य—बुद्धि-शक्तिके अभावके कारण पशु रजोगुणके स्वभाव—जैसे हिंसा, काम, क्रोध आदिका दमन नहीं कर सकते। मनुष्यका मनुष्यत्व और पशुसे उच्चत्व उसके अन्त:करणकी बुद्धि-शक्तिके कारण है, जो सत्त्वगुणका कार्य है और जो पशुमें नहीं है। अतएव मनुष्यका परम धर्म है कि सत्त्वगुणकी बुद्धि-शक्तिकी सहायतासे वह तम और रजका निग्रह करे अर्थात् तम और रजका बलिदान कर उन्हें सत्त्वमें परिणत करे। इसके बाद सत्त्वको भी अतिक्रम कर पराविद्याके तेजको लाभ करे और इस प्रकार गुणातीत होकर ब्रह्मकी प्राप्ति करे। शक्ति-उपासनाका मुख्य उद्देश्य मनुष्यके पशु-स्वभाव अर्थात् रज और तमके विकारको दिव्य भावमें परिवर्तित करना है। ऐसा परिवर्तन तमोगुण-रजोगुणरूप पशु-स्वभाव अर्थात् हिंसा, काम, क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर, मान, ईर्ष्या आदि आसुरी सम्पदाका बलिदान पराविद्याको चढ़ानेसे होगा अर्थात् आसुरी सम्पत्तिको पराविद्याकी दैवी सम्पत्तिके रूपमें परिणत करनेसे होगा। वेदमें इस बलिका नाम यज्ञ है। इन्द्रियोंके व्यापारद्वारा केवल अपना कामात्मक और रागात्मक स्वार्थ-साधन करना पशु-भाव है, जिसके कारण प्राय: दूसरेकी हिंसा, क्षति करनी

पड़ती है (जैसा कि बड़े पशु छोटेके साथ करते हैं)। इस भावके मूल दस इन्द्रिय और ग्यारहवें मनके तम-रजके विकाररूप पशुभावका हनन अथवा स्वाहा कर उनको परा प्रकृतिके चरण अर्थात् दिव्य गुणोंमें अथवा विद्याग्निमें समर्पित कर देना चाहिये, जिसमें वे इस संयोगद्वारा शुद्ध हो जायँ और उनके द्वारा विश्वकी, जो चिच्छक्तिका ही रूप है, सेवा हो। अर्थात् कामात्मक भाव स्वार्थत्यागात्मक भावमें परिणत हो जाय। यही यथार्थ शक्ति-उपासना है; इसमें इन्द्रिय-विकाररूप पशुकी बलि देनी पड़ती है, जिससे पशु-भाव दिव्य-भावमें परिणत हो जाता है। रहस्यतन्त्रका वचन है—

कामक्रोधौ विघ्नकृतौ बलिं दद्याजपं चरेत्।

एक दूसरे तन्त्रका वचन है—**'इन्द्रियाणि पशून् हत्वा।'**

युद्ध

किन्तु पशु-भावकी बलि अथवा यज्ञ करना सहज नहीं है। उसके हनन अथवा दमनकी चेष्टा करना उससे युद्ध करना है; क्योंकि संसारका नियम है कि इसमें प्रत्येक पदार्थ वर्तमान रहना चाहता है, मरना कोई नहीं चाहता। इस कारण नष्ट होनेकी सम्भावना आनेपर स्वभावतः ही बचनेके लिये घोर चेष्टा की जाती है।

वेदका आर्य (दिव्य गुण) और अनार्य (आसुरी सम्पत्ति) का युद्ध, पुराणका देवासुर-संग्राम, सप्तशती चण्डीका असुर-युद्ध, राम-रावण-युद्ध, महाभारतका कौरव-पाण्डव-युद्ध इसी अभ्यन्तर युद्धके द्योतक हैं। वेदके यज्ञ-युद्धमें स्वाहा-शक्ति अर्थात् त्याग-शक्ति प्रधान है। देवासुर संग्राममें भी वैष्णवी शक्तिकी सहायतासे विजय हुई। चण्डीके सप्तशतीका महिषासुर क्रोध है (महिष पशुमें क्रोध प्रधान है) और उसकी सेना क्रोधका विकार है। धूम्रलोचन मद्यपान है; मधुकैटभ तमोगुण है जो प्रलयमें प्रधान रहता है और जिसके दमनके बिना सृष्टि हो ही नहीं सकती। चण्ड-मुण्ड अहङ्कार है (क्योंकि मुण्डसे मनुष्यकी पृथक्ता प्रकट होती है); रक्तबीज काम है और शुम्भ-निशुम्भ लोभ है। ये सब विकार अविद्याके कार्य हैं, इनका दमन कदापि सम्भव नहीं। इसी कारण इन असुरोंके दमनके लिये देवगण शक्तिके शरणापन्न हुए, जिनके द्वारा इन असुरोंका पराभव हुआ, जैसा कि सप्तशती-चण्डीमें वर्णित है। राम-रावण-युद्धमें दशानन रावण प्रबल दशेन्द्रिय है, जिसका ग्यारहवाँ गधेका मुख अहङ्कार है। इन ग्यारहोंके समूह रावणने सद्बुद्धिरूपी सीताका हरण किया। इस युद्धमें भी भगवान् श्रीरामचन्द्रने प्रथम जगद्गुरु रामेश्वर शिवकी आराधना की और युद्धके समय शक्तिका उत्थान किया, जिसके कारण शारदीय नवरात्र-पूजा प्रारम्भ हुई। महाभारत-युद्धमें कौरव-सेना अविद्यादल है और पाण्डव-सेना विद्या-दल। श्रीकृष्णरूप कालीशक्तिकी सहायतासे ही इस युद्धमें जय मिली।

युक्त चेष्टा

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, रजोगुण, तमोगुणकी आवश्यकता यह है कि उनको अतिक्रम और निग्रहके द्वारा शुद्ध करनेसे दिव्य गुण और सामर्थ्यकी प्रापित होती है, जो अन्यथा सम्भव नहीं है। तमोगुणका आलस्य-स्वभाव निकृष्ट अवश्य है; किन्तु यदि कुत्सित कार्य करनेकी प्रबल इच्छा उत्पन्न होनेपर उसमें आलस्य किया जाय तो लाभ है। क्योंकि विलम्ब होनेसे ऐसी वासना क्षीण हो जाती है। अधिक निद्रासे हानि होती है; किन्तु स्वल्प निद्रा आवश्यक और लाभकारी है। क्षुधा, तृष्णा, मैथुन आदि अधिक और अविहित होनेसे भयावह है; किन्तु बलिवैश्वदेवद्वारा देव, ऋषि, अतिथि आदिको तृप्त करनेके बाद क्षुधा, तृष्णाकी, जो शक्तिके अङ्ग हैं, तृप्ति करना यज्ञोपासना है। कामात्मक और अयुक्त मैथुन हानिप्रद है; किन्तु उत्तम सन्तानकी उत्पत्तिद्धारा पितृ-ऋणसे उद्धार पानके लिये, गृहस्थ-ब्रह्मचारीके नियमोंका बिना भंग किये हुए जो मैथुन होता है, वह यज्ञोपासना है। कोई भी, किसी भी प्रकारसे हठात् न तो रजोगुण, तमोगुणका निग्रह कर सकता है, न एकदम उन्हें रोक सकता है। क्योंकि, यदि किसी आवश्यक उद्देश्यके साधनके लिये वे जरूरी न होते तो उनका प्रादुर्भाव ही न होता। इस सृष्टिमें कुछ भी व्यर्थ अथवा अनावश्यक नहीं है। रजोगुण, तमोगुणकी क्रियाके पालनमें उसका व्यवहार युक्त परिमाणमें करनेसे ये गुण वश हो जाते हैं। इसी कारण श्रीमद्भागवद्गीतामें कहा गया है कि आहार, विहार, चेष्टा, कर्म, निद्रा, जागरणका अत्यन्त निग्रह हानिकर है, किन्तु विहित और युक्त परिमाणमें करनेसे लाभ होता है। रजोगुण, तमोगुणको, युक्त आहार, विहार और चेष्टा आदिके द्वारा उनकी कामात्मक प्रवृत्तिको धीरे-धीरे बदलकर परमार्थमें प्रवृत्त कर देना तन्त्र-शास्त्रोक्त शक्ति-उपासनाका मुख्य तात्पर्य है। यहाँ सकाम कामका परिवर्तन निःस्वार्थ प्रेममें होता है; क्रोधका प्रयोग केवल दुर्गुणोंके प्रति करके उसे क्षमामें परिवर्तन किया जाता है; मैथुन केवल पितृऋणसे मुक्ति पानेके निमित्त, उत्तम सन्तानकी उत्पत्तिके लिये, जगन्माताका परमावश्यक कार्य समझकर, उन्हींके ही लिये किया जाता है; धन-संग्रह केवल कर्तव्य-पालनार्थ किया जाता है; देव-पितृ-कार्य केवल यज्ञके उद्देश्यसे किये जाते हैं।

जिह्वा आदि इन्द्रियोंकी बलि

इन्द्रियोंमें जिह्वा और जननेन्द्रिय बड़ी प्रबल हैं और इनके दुरुपयोगसे बहुत बड़ी हानि होती है। किन्तु साथ ही ये परमावश्यक भी हैं। जिह्वाका मुख्य कार्य

भोजन है, जिसके बिना शरीर रही नहीं सकता। बिना मैथुनके यह मैथुनी सृष्टि चल नहीं सकती। इसी निमित्त स्मृति और तन्त्र दोनोंने आहार, पान, मैथुन आदि कामात्मक लिप्साका निग्रह करनेके लिये उन्हें धर्म और उपासनाका अङ्ग बना दिया है। जिसमें भोगेच्छासे न किये जाकर ये धर्म अथवा उपास्यकी सेवाकी भाँति किये जायँ। किन्तु जो इन व्यवहारोंको ऊपरसे धर्म अथवा उपासनाकी घोषणा करते हुए अभ्यन्तरमें कामासक्त होकर करते हैं, वे निश्चय ही भ्रष्ट हो जाते हैं। अतएव इन दो मुख्य पशु-भावको—रजोगुणात्मक कामात्मक स्वभावको परार्थमें परिवर्तित करना चाहिये, जो (परमार्थ और परार्थ) पराशक्तिका दिव्य गुण है। यही इनकी पशु-बलि पराशक्तिके लिये करना है। केवल शरीर-रक्षणार्थ सात्त्विक पदार्थका भोजन करना जिह्वापशुकी बलि है। इसीको छागबलि कहते हैं। क्योंकि छागमें जिह्वा इन्द्रिय प्रबल होती है, यहाँतक कि वह अफीम भी खा जाती है। अपनी धर्मपत्नीके सिवा अन्य सब स्त्रियोंको जगन्माता समझे—

विद्याः समस्तास्व देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।

(सप्तशती चण्डी)

गृहस्थका ब्रह्मचर्यका व्रत धारण करके पितृ-ऋणसे मुक्ति पानेके लिये उत्तम सन्ततिके उत्पादनार्थ अपनी धर्म-पत्नीके साथ विहित मैथुन करना जननेन्द्रियरूप पशुका बलिदान है, जो जगन्माताकी पूजा अथवा यज्ञ हे। जगन्माता दुर्गा सृष्टिकर्त्री हैं, इस कारण उत्तम सन्तानोत्पादनार्थ विहित मैथुन उनकी पूजा है। स्मरण रहे कि कामात्मक मैथुनसे कामी सन्ततिकी उत्पत्ति होती है जिससे जगन्माताके कार्यमें बाधा पड़ती है; अतएव वह अधर्म है। इसलिये गृहस्थके निमित्त जो ब्रह्मचर्य-अविरोधी मैथुन है, उसीको सुसन्तानार्थ विहितरूपसे करना जगन्माताके निमित्त बलि अथवा पूजा है, इसके विरुद्ध करना नहीं। इसीको कपोत-बलि कहते हैं; क्योंकि कपोतमें कामेच्छा प्रबल है। इस प्रकार मैथुनकी कामात्मक लिप्साको धर्मार्थ ब्रह्मचर्ययुक्त विहित और युक्त मैथुनमें परिवर्तन करना ही शक्तिकी पूजा है।

तीनों गुणोंकी अधिष्ठात्री देवियाँ

प्रवृत्ति-मार्गमें सन्तानोत्पादन करना आवश्यक है, जिसमें अधकांश लोग काम-लिप्साके दमन करनेपर वह सात्त्विक धर्म-लिप्सामें परिवर्तित हो जाती है अर्थात् भोगके बदले उसका धर्म-पालन उद्देश्य बन जाता है। यह रजोगुणका अतिक्रमण करनेसे प्राप्त होता है। अतएव रजोगुण और उसका सञ्चालन करनेवाली रजोगुणी शक्तियाँ परमावश्यक हैं। इसी प्रकार तमोगुणी शक्तियाँ भी सीमित और उचित परिमाणमें आवश्यक हैं।

साधन-प्रणाली

रजोगुण-तमोगुणके दमनरूप युद्धमें दैवी सम्पत्तिके द्वारा आसुरी सम्पत्तिका दमन करनेसे ज्ञानकी प्राप्ति होती है। श्रीमद्भगवद्गीताके सोलहवें अध्यायके प्रारम्भमें दैवी-सम्पत्ति और आसुरी-सम्पत्तिके गुण वर्णित हैं। ज्ञानके लक्षणका वर्णन भी भगवद्गीताके तेरहवें अध्यायमें है। ज्ञानका दूसरा नाम विद्या है। महाविद्याकी छत्रछाया और आश्रयमें आनेके लिये अविद्याकी आसुरी सम्पत्तिका दमन करना चाहिये, जो दैवी सम्पत्तिकी प्राप्तिद्वारा ही सम्भव है। अतएव विद्या-शक्तिके मुख्य गुण जो अहिंसा, सत्य, अभय, बुद्धि, बोध-शक्ति, लज्जा, पुष्टि, तुष्टि, शान्ति, क्षान्ति, मेधा, आर्द्र चित्तता, श्रद्धा, उदारता, सद्वृत्ति, इन्द्रियनिग्रह, धृति, स्मृति, स्वाध्याय, तप, सरलता, कोमलता, दया, स्त्रीमात्रको जगन्माताके रूपमें देखना आदि हैं; और जिन्हें सप्तशती-चण्डीमें विद्या-शक्तिके रूप कहा गया है; अभ्यासके द्वारा उनकी पूर्ण प्राप्ति होनेपर ही अविद्याका नाश होगा, विद्या-शक्तिके साथ सम्बन्ध स्थापित होनेपर ही अविद्याका नाश होगा, विद्या-शक्तिके साथ सम्बन्ध स्थापित होगा और उनकी प्रसन्नता प्राप्त होगी। ऊपर कहे हुए शक्तिके रूप जो सद्‌गुण हैं, उनके अभ्याससे ही गीताके ज्ञान और दैवी सम्पत्तिकी प्राप्ति होगी जिसके द्वारा आसुरी सम्पत्ति अर्थात् पशुभावका दमन होगा और फिर उससे दिव्यभावकी प्राप्ति होगी, जो शक्ति-उपासनाका मुख्य उद्देश्य है तथा मनुष्य-जीवनका परम लक्ष्य है। उपयुक्त पूजा, जप, ध्यान, पाठ आदिका भी मुख्योद्देश्य उपर्युक्त दिव्य गुणोंकी प्राप्ति ही है। यही यथार्थ शक्ति-उपासना है, जो सबके लिये परम आवश्यक है। ऊपर कथित शक्तिके दिव्य गुणोंकी प्राप्तिके बिना न कर्मयोग, न अभ्यासयोग, न भक्तियोग, न किसी इष्टदेवकी प्राप्ति और न ब्रह्मज्ञानकी प्राप्ति सम्भव है। जो इन दिव्य गुणोंकी प्राप्तिको शक्ति-उपासनाका मुख्य अङ्ग नहीं समझते, वे बड़ी भारी भूल करते हैं।

मोक्षदायिनी शक्तिके नाना भेद

वेदमें पराशक्तिकी संज्ञा गायत्री है, जिसके द्वारा एकाक्षर ब्रह्मरूप प्रणवकी प्राप्ति होती है। यज्ञके देवकर्ममें पराशक्ति स्वाहा, पितृकर्ममें स्वधा, योगमें कुण्डलिनी शक्ति, ज्ञानयोगमें विद्या, भक्तियोगमें ह्लादिनी-शक्ति, उपासना-काण्डमें दुर्गा, लक्ष्मी, सीता, राधा आदि हैं। इन सबकी प्राप्तिके बिना इनसे सम्बन्ध रखनेवाली साधनामें सफलता नहीं मिल सकती। बौद्ध-धर्ममें प्रज्ञापारमिता, जैन-धर्ममें तीर्थङ्कर भी पराशक्तिके प्रतिरूप हैं; क्योंकि तीर्थङ्कर अर्थात् महात्मा सद्‌गुरुगण सदा दैवी प्रकृति (पराशक्ति) के आश्रयमें रहते हैं जैसा कि गीता अ०९, श्लोक १३ का वचन है—

महात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः।
भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम्॥

(६)

भगवती शक्ति

सर्वोपरि, सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापी, सर्वाधार, सर्वमय, समस्त-गुणाधार, निर्विकार, नित्य, निरञ्जन, सृष्टिकर्त्ता, पालनकर्त्ता, संहारकर्त्ता, विज्ञानानन्दघन, सगुण, निर्गुण, साकार, निराकार परमात्मा वस्तुतः एक ही हैं। वे एक ही अनेक भावों और अनेक रूपोंमें लीला करते हैं। हम अपने समझनेके लिये मोटे रूपसे उनके आठ रूपोंका भेद कर सकते हैं। १—नित्य, विज्ञानानन्दघन, निर्गुण, निराकार, मायारहित, एकरस ब्रह्म; २—सगुण, सनातन, सर्वेश्वर, सर्वशक्तिमान्, अव्यक्त निराकार परमात्मा; ३—सृष्टिकर्त्ता प्रजापति ब्रह्मा; ४—पालनकर्त्ता भगवान् विष्णु; ५—संहारकर्त्ता भगवान् रुद्र; ६—श्रीराम, श्रीकृष्ण, श्रीदुर्गा, काली आदि साकार रूपोंमें अवतरित रूप; ७—असंख्य जीवात्मारूपसे विभिन्न जीवशरीरोंमें व्याप्त और ८—विश्व ब्रह्माण्डरूप विराट्। ये आठों रूप एक ही परमात्माके हैं। इन्हीं समग्ररूप प्रभुको रुचिवैचित्र्यके कारण संसारमें लोग ब्रह्म, सदाशिव, महाविष्णु, ब्रह्मा, महाशक्ति, राम, कृष्ण, गणेश, सूर्य, अल्लाह, गॉड, प्रकृति आदि भिन्न-भिन्न नाम-रूपोंमें विभिन्न प्रकारसे पूजते हैं। वे सच्चिदानन्दघन अनिर्वचनीय प्रभु एक ही हैं, लीलाभेदसे उनके नामरूपोंमें भेद है और इसी भेदभावके कारण उपासनामें भेद है। यद्यपि उपासकको अपने इष्टदेवके नाम-रूपमें ही अनन्यता रखनी चाहिये तथा उसीकी पूजा शास्त्रोक्त पूजन-पद्धतिके अनुसार करनी चाहिये, परंतु इतना निरन्तर स्मरण रखना चाहिये कि शेष सभी रूप और नाम भी उसीके इष्टदेवके हैं। उसीके प्रभु इतने विभिन्न नामों-रूपोंमें समस्त विश्वके द्वारा पूजित होते हैं। इनके अतिरिक्त अन्य कोई है ही नहीं। तमाम जगत्में वस्तुत एक वही फैले हुए हैं। जो विष्णुको पूजता है, वह अपने आप ही शिव, ब्रह्मा, राम, कृष्ण आदिको पूजता है और जो राम, कृष्णको पूजता है वह ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदिको। एककी पूजासे स्वाभाविक ही सभीकी पूजा हो जाती है; क्योंकि एक ही सब बने हुए हैं। परंतु जो किसी एक रूपसे अन्य समस्त रूपोंको अलग मानकर औरोंकी अवज्ञा करके केवल अपने इष्ट एक ही रूपको अपनी ही सीमामें आबद्ध रखकर पूजता है, वह अपने परमेश्वरको छोटा बना लेता है, उनको सर्वेश्वरके आसनके नीचे उतारता है। इसलिये उसकी पूजा सर्वोपरि सर्वमय भगवान्की न होकर एकदेशनिवासी स्वल्प देवविशेषकी होती है और उसे वैसा ही उसका अल्प फल भी मिलता है। अतएव पूजो एक ही रूपको, परंतु शेष सब रूपोंको समझो उसी एकके वैसे ही शक्तिसम्पन्न अनेक रूप!

परिणामवाद

असलमें वह एक महाशक्ति ही परमात्मा हैं जो विभिन्न रूपोंमें विविध लीलायें करती हैं। परमात्माके पुरुषवाचक सभी स्वरूप इन्हीं अनादि, अविनाशिनी, अनिर्वचनीया, सर्वशक्तिमयी, परमेश्वरी आद्या महाशक्तिके ही हैं। यही महाशक्ति अपनी मायाशक्तिको जब अपने अन्दर छिपाये रखती है, उससे कोई क्रिया नहीं करती, तब निष्क्रिय, शुद्ध-ब्रह्म कहलाती है। यही जब उसे विकासोन्मुख करके एकसे अनेक होनेका संकल्प करती हैं, तब स्वयं ही पुरुषरूपसे मानो अपनी ही प्रकृतिरूप योनिमें संकल्पद्वारा चेतनरूप बीज स्थापन करके सगुण, निराकार परमात्मा बन जाती है। इसीकी अपनी शक्तिसे गर्भाशयमें वीर्यस्थापनसे होनेवाले विकारकी भाँति उस प्रकृतिमें क्रमशः सात विकृतियाँ होती हैं (महत्तत्त्व—समष्टि बुद्धि, अहंकार और सूक्ष्म पञ्चतन्मात्राएँ—मूल प्रकृतिके विकार होनेसे इन्हें विकृति कहते हैं; परंतु इनसे अन्य सोलह विकारोंकी उत्पत्ति होनेके कारण इन सातोंके समुदायको विकृति भी कहते हैं) फिर अहंकारसे मन और दस (ज्ञान-कर्मरूप) इन्द्रियाँ और पञ्चतन्मात्रासे पञ्चमहाभूतोंकी उत्पत्ति होती है। (इसीलिये इन दोनोंके समुदायका नाम प्रकृति-विकृति है। मूल प्रकृतिके सात विकार, सप्तधा विकाररूपा प्रकृतिसे उत्पन्न सोलह विकार और स्वयं मूल-प्रकृति—ये कुल मिलाकर चौबीस तत्त्व हैं) यों वह महाशक्ति ही अपनी प्रकृतिसहित चौबीस तत्त्वोंके रूपमें यह स्थूल संसार बन जाती हैं और जीवरूपसे स्वयं पचीसवें तत्त्वरूपमें प्रविष्ट होकर खेल खेलती हैं। चेतन परमात्मरूपिणी महाशक्तिके बिना जड प्रकृतिसे यह सारा कार्य कदापि सम्पन्न नहीं हो सकता। इस प्रकार महाशक्ति विश्वरूप विराट् बनती हैं और इस सृष्टिके निर्माणमें स्थूल निर्माता प्रजापतिके रूपमें आप ही अंशावतारके भावसे ब्रह्मा और पालनकर्त्ताके रूपमें विष्णु और संहारकर्त्ताके रूपमें रुद्र बन जाती हैं और ये ब्रह्मा, विष्णु, शिवप्रभृति अंशावतार भी किसी कल्पमें दुर्गारूपसे होते हैं, किसीमें महाविष्णुरूपसे, किसीमें महाशिवरूपसे, किसीमें श्रीरामरूपसे और किसीमें श्रीकृष्णरूपसे। एक ही शक्ति विभिन्न नाम-रूपोंसे सृष्टि-रचना करती हैं। इस विभिन्नताका कारण और रहस्य भी उन्हींको ज्ञात है। यों अनन्त ब्रह्माण्डोंमें महाशक्ति असंख्य ब्रह्मा, विष्णु, महेश बनी हुई हैं और अपनी योगमायासे अपनेको आवृतकर आप ही जीवसंज्ञाको प्राप्त हैं। ईश्वर, जीव, जगत् तीनों आप ही हैं। भोक्ता, भोग्य और भोग तीनों आप ही हैं। इन तीनोंको अपनेसे निर्माण करनेवाली, तीनोंमें व्याप्त रहनेवाली भी आप ही हैं।

परमात्मरूपा यह महाशक्ति स्वयं अपरिणामिनी हैं, परंतु इन्हींकी मायाशक्तिसे सारे परिणाम होते हैं। यह स्वभावसे ही सत्ता देकर अपनी मायाशक्तिको क्रीडाशाला

अर्थात् क्रियाशीला बनाती हैं, इसलिये इनके शुद्ध विज्ञानानन्दघन न होनेपर भी इनमें परिणाम दीखता है; क्योंकि इनकी अपनी शक्ति मायाका विकसित स्वरूप नित्य क्रीडामय होनेके कारण सदा बदलता ही रहता है और वह मायाशक्ति सदा इन महाशक्तिसे अभिन्न रहती है। वह महाशक्तिकी ही स्व-शक्ति है और शक्तिमान्‌से शक्ति कभी पृथक् नहीं हो सकती, चाहे वह पृथक् दीखे भले ही, अतएव शक्तिका परिणाम स्वयमेव ही शक्तिमान्‌पर आरोपित हो जाता है, इस प्रकार शुद्ध ब्रह्म या महाशक्तिमें परिणामवाद सिद्ध होता है।

मायावाद

और चूँकि संसाररूपसे व्यक्त होनेवाली यह समस्त क्रीडा महाशक्तिकी अपनी शक्ति—मायाका ही खेल है और मायाशक्ति उनसे अलग नहीं, इसलिये यह सारा उन्हींका ऐश्वर्य है। उनको छोड़कर जगत्‌में और कोई वस्तु ही नहीं; दृश्य, द्रष्टा और दर्शन—तीनों वह आप ही हैं, अतएव जगत्‌को मायिक बतलानेवाला मायावाद भी इस हिसाबसे ठीक ही है।

आभासवाद

इसी प्रकार महाशक्ति ही अपने मायारूपी दर्पणमें अपने विविध शृंगारों और भावोंको देखकर जीवरूपसे आप ही मोहित होती हैं। इससे आभासवाद भी सत्य है।

माया अनादि और सान्त है

परमात्मरूप महाशक्तिकी उपर्युक्त मायाशक्तिको अनादि और सान्त कहते हैं। सो उसका अनादि होना तो ठीक ही है; क्योंकि वह शक्तिमयी महाशक्ति तो नित्य अविनाशिनी है, फिर उसकी शक्ति माया अन्तवाली कैसे होगी? इसका उत्तर यह है कि वास्तवमें वह अन्तवाली नहीं है। अनादि, अनन्त, नित्य, अविनाशी परमात्मरूपा महाशक्तिकी भाँति उसकी शक्तिका भी कभी विनाश नहीं हो सकता, परंतु जिस समय वह कार्यकरणविस्ताररूप समस्त संसारसहित महाशक्तिके सनातन अव्यक्त परमात्मरूपमें लीन रहती है, क्रियाहीना रहती है, तबतकके लिये वह अदृश्य या शान्त हो जाती है और इसीसे उसे सान्त कहते हैं। इस दृष्टिसे उसको सान्त कहना सत्य ही है।

मायाशक्ति अनिर्वचनीय है

कोई-कोई परमात्मरूपा महाशक्तिकी इस मायाशक्तिको अनिर्वचनीय कहते हैं, सो भी ठीक ही है; क्योंकि यह शक्ति उस सर्वशक्तिमती महाशक्तिकी अपनी ही तो शक्ति है। जब वह अनिर्वचनीय है, तब उसकी अपनी शक्ति अनिर्वचनीय क्यों न होगी?

मायाशक्ति और महाशक्ति

कोई-कोई कहते हैं कि इस मायाशक्तिका ही नाम महाशक्ति, प्रकृति, विद्या, अविद्या, ज्ञान, अज्ञान आदि है, महाशक्ति पृथक् वस्तु नहीं है। सो उनका यह कथन भी एक दृष्टिसे सत्य ही है; क्योंकि मायाशक्ति परमात्मरूपा महाशक्तिकी ही शक्ति है और वही जीवोंके बाँधनेके लिये अज्ञान या अविद्यारूपसे और उनकी बन्धन-मुक्तिके लिये ज्ञान या विद्यारूपसे अपना स्वरूप प्रकट करती है, तब इनसे भिन्न कैसे रही? हाँ, जो मायाशक्तिको ही मानते हैं और महाशक्तिका कोई अस्तित्व ही नहीं मानते वे तो मायाके अधिष्ठान ब्रह्मको ही अस्वीकार करते हैं, इसलिये वे अवश्य ही मायाके चक्करमें पड़े हुए हैं।

निर्गुण और सगुण

कोई इस परमात्मरूपा महाशक्तिको निर्गुण कहते हैं और कोई सगुण। ये दोनों बातें भी ठीक हैं, क्योंकि उस एकके ही तो ये दो नाम हैं। जब मायाशक्ति क्रियाशील रहती है, तब उसका अधिष्ठान महाशक्ति सगुण कहलाती हैं। और जब वह महाशक्तिमें मिली रहती है, तब महाशक्ति निर्गुण हैं। इन अनिर्वचनीया परमात्मरूपा महाशक्तिमें परस्परविरोधी गुणोंका नित्य सामञ्जस्य है। वे जिस समय निर्गुण हैं, उस समय भी उनमें गुणमयी मायाशक्ति छिपी हुई मौजूद है और जब वे सगुण कहलाती हैं उस समय भी वे गुणमयी मायाशक्तिकी अधीश्वरी और सर्वतन्त्रस्वतन्त्र होनेसे वस्तुतः निर्गुण ही हैं। अथवा स्व-स्वरूपमय अचिन्त्य अनन्त दिव्य गुणोंसे नित्य विभूषित होनेसे वे सगुण हैं, और ये दिव्य गुण उनके स्वरूपसे अभिन्न होनेके कारण वही वस्तुतः निर्गुण भी हैं, तात्पर्य कि उनमें निर्गुण और सगुण दोनों लक्षण सभी समय वर्तमान हैं। जो जिस भावसे उन्हें देखता है, उसको उनका वैसा ही रूप भान होता है। असलमें वे कैसी हैं, क्या हैं, इस बातको वही जानती हैं।

शक्ति और शक्तिमान्

कोई-कोई कहते हैं कि शुद्ध ब्रह्ममें मायाशक्ति नहीं रह सकती, माया रही तो वह शुद्ध कैसे? बात समझनेकी है। शक्ति कभी शक्तिमान्से पृथक् नहीं रह सकती। यदि शक्ति नहीं है तो उसका शक्तिमान् नाम नहीं हो सकता और शक्तिमान् न हो तो शक्ति रहे कैसे? अतएव शक्ति सदा ही शक्तिमान्में रहती है। शक्ति नहीं होती तो सृष्टिके समय शुद्ध ब्रह्ममें एकसे अनेक होनेका संकल्प कहाँसे और कैसे होता? इसपर कोई यदि यह कहे कि 'जिस समय संकल्प हुआ, उस समय शक्ति आ गयी, पहले नहीं थी।' अच्छी बात है; पर बताओ, वह शक्ति कहाँसे आ गयी? ब्रह्मके सिवा कहाँ जगह थी जहाँ वह अबतक

छिपी बैठी थी? इसका क्या उत्तर है? 'अजी, ब्रह्ममें कभी संकल्प ही नहीं हुआ, यह सब असत् कल्पनायें हैं, मिथ्या स्वप्नकी-सी बातें हैं।' अच्छी बात है, पर यह मिथ्या कल्पनायें किसने किस शक्तिसे कीं और मिथ्या स्वप्नको किसने किस सामर्थ्यसे देखा? और मान भी लिया जाय कि यह सब मिथ्या है तो इतना तो मानना ही पड़ेगा कि शुद्ध ब्रह्मका अस्तित्व किससे है? जिससे वह अस्तित्व है वही उसकी शक्ति है। क्या जीवनीशक्ति बिना भी कोई जीवित रह सकता है? अवश्य ही ब्रह्मकी वह जीवनीशक्ति ब्रह्मसे भिन्न नहीं है। वही जीवनीशक्ति अन्यान्य समस्त शक्तियोंकी जननी हैं, वही परमात्मरूपा महाशक्ति हैं। अन्यान्य सारी शक्तियाँ अव्यक्तरूपसे उन्हींमें छिपी रहती हैं—और जब वे चाहती हैं तब उनको प्रकट करके काम लेती हैं। हनुमान्में समुद्र लाँघनेकी शक्ति थी, पर वह अव्यक्त थी, जाम्बवान्के याद दिलाते ही हनुमानने उसे व्यक्त रूप दे दिया। इसी प्रकार सर्वशक्तिमान् परमात्मा या परमा शक्ति भी नित्य शक्तिमान् हैं; हाँ, कभी वह शक्ति उनमें अव्यक्त रहती है और कभी व्यक्त। अवश्य ही भगवान्की शक्तिको व्यक्त रूप भगवान् स्वयं ही देते हैं, यहाँ किसी जाम्बवान्की आवश्यकता नहीं होती। परंतु शक्ति नहीं है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। इसीसे ऋषि-मुनियोंने इस शक्तिमान् परमात्माको महाशक्तिके रूपमें देखा।

शक्ति और शक्तिमान्की अभिन्नता

इन्हीं सगुण-निर्गुणरूप भगवान् या भगवतीसे उपर्युक्त प्रकारसे कभी महादेवीरूपके द्वारा, कभी महाशिवरूपके द्वारा, कभी महाविष्णुरूपके द्वारा, कभी श्रीकृष्णरूपके द्वारा, कभी श्रीरामरूपके द्वारा सृष्टिकी उत्पत्ति होती है, और यही परमात्मरूपा महाशक्ति पुरुष और नारीरूपमें विविध अवतारोंमें प्रकट होती हैं। वस्तुतः यह नारी हैं न पुरुष, और दूसरी दृष्टिसे दोनों ही हैं। अपने पुरुषरूप अवतारोंमें स्वयं महाशक्ति ही लीलाके लिये उन्हींके अनुसार रूपोंमें उनकी पत्नी बन जाती हैं। ऐसे बहुत-से इतिहास मिलते हैं जिनमें महाविष्णुने लक्ष्मीसे, श्रीकृष्णने राधासे, श्रीसदाशिवने उमासे और श्रीरामने सीतासे एवं इसी प्रकार श्रीलक्ष्मी, राधा, उमा और सीताने महाविष्णु, श्रीकृष्ण, श्रीसदाशिव और श्रीरामसे कहा है कि हम दोनों सर्वथा अभिन्न हैं, एकके ही दो रूप हैं, केवल लीलाके लिये एकके दो रूप बन गये हैं, वस्तुतः हम दोनोंमें कोई भी अन्तर नहीं है।

शक्तिकी महिमा

यही आदिके तीन युगल उत्पन्न करनेवाली महालक्ष्मी हैं; इन्हींकी शक्तिसे ब्रह्मादि देवता बनते हैं, जिनसे विश्वकी उत्पत्ति होती है। इन्हींकी शक्तिसे विष्णु और शिव प्रकट होकर विश्वका पालन और संहार करते हैं। दया, क्षमा, निद्रा,

स्मृति, क्षुधा, तृष्णा, तृप्ति, श्रद्धा, भक्ति, धृति, मति, तुष्टि, पुष्टि, शान्ति, कान्ति, लज्जा आदि इन्हीं महाशक्तिकी शक्तियाँ हैं। यही गोलोकमें श्रीराधा, साकेतमें श्रीसीता, क्षीरोदसागरमें लक्ष्मी, दक्षकन्या सती, दुर्गतिनाशिनी मेनकापुत्री दुर्गा हैं। यही वाणी, विद्या, सरस्वती, सावित्री और गायत्री हैं। यही सूर्यकी प्रभाशक्ति, पूर्णचन्द्रकी सुधावर्षिणी शोभाशक्ति, अग्निकी दाहिकाशक्ति, वायुकी वहनशक्ति, जलकी शीतलताशक्ति, धराकी धारणाशक्ति और शस्यकी प्रसूतिशक्ति हैं। यही तपस्वियोंका तप, ब्रह्मचारियोंका ब्रह्मतेज, गृहस्थोंकी सर्वाश्रम-आश्रयता, वानप्रस्थोंकी संयमशीलता, संन्यासियोंका त्याग, महापुरुषोंकी महत्ता और मुक्त पुरुषोंकी मुक्ति हैं। यही शूरोंका बल, दानियोंकी उदारता, माता-पिताका वात्सल्य, गुरुकी गुरुता, पुत्र और शिष्यकी गुरुजनभक्ति, साधुओंकी साधुता, चतुरोंकी चातुरी और मायावियोंकी माया हैं। यही लेखकोंकी लेखनशक्ति, वाग्मियोंकी वक्तृत्वशक्ति, न्यायी नरेशोंकी प्रजा-पालनशक्ति और प्रजाकी राजभक्ति हैं। यही सदाचारियोंकी दैवी-सम्पत्ति, मुमुक्षुओंकी षट्सम्पत्ति, धनवानोंकी अर्थसम्पत्ति और विद्वानोंकी विद्यासम्पत्ति हैं। यही ज्ञानियोंकी ज्ञानशक्ति, प्रेमियोंकी प्रेमशक्ति, वैराग्यवानोंकी विरागशक्ति और भक्तोंकी भक्तिशक्ति हैं। यही राजाओंकी राजलक्ष्मी, वणिकोंकी सौभाग्यलक्ष्मी, सज्जनोंकी शोभालक्ष्मी और श्रेयार्थियोंकी श्री हैं। यही पतिकी पत्नीप्रीति और पत्नीकी पतिव्रताशक्ति हैं। सारांश यह कि जगत्में तमाम जगह परमात्मरूपा महाशक्ति ही विविध शक्तियोंके रूपमें खेल रही हैं। सभी जगह स्वाभाविक ही शक्तिकी पूजा हो रही है। जहाँ शक्ति नहीं है वही शून्यता है। शक्तिहीनकी कहीं कोई पूछ नहीं। प्रह्लाद-ध्रुव भक्तिशक्तिके कारण पूजित हैं। गोपी प्रेम-शक्तिके कारण जगत्पूज्य हैं। भीष्म-हनुमानकी ब्रह्मचर्यशक्ति; व्यास-वाल्मीकिकी कवित्वशक्ति; भीम-अर्जुनकी शौर्यशक्ति; युधिष्ठिर-हरिश्चन्द्रकी सत्यशक्ति; शङ्कर-रामानुजकी विज्ञानशक्ति; शिवाजी-प्रतापकी वीरशक्ति; इस प्रकार जहाँ देखो वहीं शक्तिके कारण ही सबकी शोभा और पूजा है। सर्वत्र शक्तिका ही समादर और बोलबाला है। शक्तिहीन वस्तु जगत्में टिक ही नहीं सकती। सारा जगत् अनादिकालसे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्षरूपसे निरन्तर केवल शक्तिकी ही उपासनामें लग रहा है और सदा लगा रहेगा।

शक्तिकी शरण

यह महाशक्ति ही सर्वकारणरूप प्रकृतिकी आधारभूता होनेसे महाकारण हैं, यही मायाधीश्वरी हैं, यही सृजन-पालन-संहारकारिणी आद्या नारायणी शक्ति हैं और यही प्रकृतिके विस्तारके समय भर्ता, भोक्ता और महेश्वर होती हैं। परा और अपरा दोनों प्रकृतियाँ इन्हींकी हैं अथवा यही दो प्रकृतियोंके रूपमें प्रकाशित होती हैं। इनमें द्वैताद्वैत दोनोंका समावेश है। यही वैष्णवोंकी श्रीनारायण और

महालक्ष्मी, श्रीराम और सीता, श्रीकृष्ण और राधा; शैवोंकी श्रीशङ्कर और उमा, गाणपत्योंकी श्रीगणेश और ऋद्धि-सिद्धि, सौरोंकी श्रीसूर्य और उषा, ब्रह्मवादियोंकी शुद्ध-ब्रह्म और ब्रह्मविद्या हैं और शाक्तोंकी महादेवी हैं। यही पञ्चमहाशक्ति, दस महाविद्या, नव दुर्गा हैं। यही अन्नपूर्णा, जगद्धात्री, कात्यायनी, ललिताम्बा हैं। यही शक्तिमान् हैं, यही शक्ति हैं, यही नर हैं, यही नारी हैं, यही माता, धाता, पितामह हैं; सब कुछ यही हैं। सबको सर्वतोभावसे इन्हींके शरण जाना चाहिये।

जो श्रीकृष्णरूपकी उपासना करते हैं, वे भी इन्हींकी करते हैं। जो श्रीराम, शिव या गणेशरूपकी उपासना करते हैं, वे भी इन्हींकी करते हैं। और इसी प्रकार जो श्री, लक्ष्मी, विद्या, काली, तारा, षोडशी आदि रूपोंमें उपासना करते हैं, वे भी इन्हींकी करते हैं। श्रीकृष्ण ही काली हैं, माँ काली ही श्रीकृष्ण हैं। इसलिये जो जिस रूपकी उपासना करते हों, उन्हें उस उपासनाको छोड़नेकी कोई आवश्यकता नहीं है। हाँ, इतना अवश्य निश्चय कर लेना चाहिये कि 'मैं जिन भगवान् या भगवतीस्वरूपकी उपासना कर रहा हूँ, वही सर्वदेवमय और सर्वरूपमय हैं; सर्वशक्तिमान् और सर्वोपरि हैं। दूसरोंके सभी इष्टदेव इन्हींके विभिन्न स्वरूप हैं। हाँ, पूजामें भगवान्के अन्यान्य रूपोंका यदि कहीं विरोध हो या उनसे द्वेषभाव हो तो उसे जरूर निकाल देना चाहिये; साथ ही किसी तामसिक पद्धतिका अवलम्बन किया हुआ हो तो उसे भी अवश्य ही छोड़ देना चाहिये।'

तामसीको नरक-प्राप्ति

तामसिक देवता, तामसिक पूजा, तामसिक आचार सभी नरकोंमें ले जानेवाले हैं; चाहे उनसे थोड़े कालके लिये सुख मिलता हुआ-सा प्रतीत भले ही हो। देवता वस्तुतः तामसिक बना लेते हैं। जो देवता अल्प सीमामें आबद्ध हों, जिनको तामसिक वस्तुएँ प्रिय हों, जो मांस-मद्य आदिसे प्रसन्न होते हों, पशु-बलि चाहते हों, जिनकी पूजामें तामसिक गंदी वस्तुओंका प्रयोग आवश्यक हो, जिनके लिये पूजा करनेवालेको तामसिक आचारकी प्रयोजनीयता प्रतीत होती हो; वह देवता, उनकी पूजा और उन पूजकोंके आचार तामसी हैं और तामसी पापाचारीको बार-बार नरकोंकी प्राप्ति होगी, इसमें कोई संदेह नहीं।

तन्त्रके नामपर व्यभिचार और हिंसा

यद्यपि तन्त्रशास्त्र समस्त श्रेष्ठ साधनशास्त्रोंमें एक बहुत उत्तम शास्त्र है, उसमें अधिकांश बातें सर्वथा अभिनन्दनीय और साधकको परम सिद्धि—मोक्ष प्रदान करनेवाली हैं, तथापि सुन्दर बगीचेमें भी जिस प्रकार असावधानीसे कुछ जहरीले पौधे उत्पन्न हो जाया करते और फूलने-फलने भी लगते हैं, इसी प्रकार तन्त्रमें भी बहुत-सी अवाञ्छनीय गंदगी आ गयी है। यह विषयी कामान्ध मनुष्यों

और मांसाहारी मद्यलोलुप अनाचारियोंकी ही काली करतूत मालूम होती है, नहीं तो, श्रीशिव और ऋषिप्रणीत मोक्षप्रदायक पवित्र तन्त्रशास्त्रमें ऐसी बातें कहाँसे और क्यों आतीं? जिस शास्त्रमें अमुक-अमुक जातिकी स्त्रियोंका नाम ले-लेकर व्यभिचारकी आज्ञा दी गयी हो और उसे धर्म तथा साधन बताया गया हो, जिस शास्त्रमें पूजाकी पद्धतिमें बहुत ही गंदी वस्तुएँ पूजा-सामग्रीके रूपमें आवश्यक बतायी गयी हों, जिस शास्त्रके माननेवाले साधक हजार स्त्रियोंके साथ व्यभिचारको और अष्टोत्तरशत नरबालकोंकी बलिको अनुष्ठानकी सिद्धिमें कारण मानते हों, वह शास्त्र तो सर्वथा अशास्त्र और शास्त्रके नामको कलङ्कित करनेवाला ही है। व्यभिचारकी आज्ञा देनेवाले तन्त्रोंके अवतरण लेखकने पढ़े हैं और तन्त्रके नामपर व्यभिचार और नरबलि करनेवाले मनुष्योंकी घृणित गाथाएँ विश्वस्तसूत्रसे सुनी हैं। ऐसे महान् तामसिक कार्योंको शास्त्रसम्मत मानकर भलाईकी इच्छासे इन्हें करना सर्वथा भ्रम है, भारी भूल है और ऐसी भूलमें कोई पड़े हुए हों तो उन्हें तुरंत ही इससे निकल जाना चाहिये। और जो जान-बूझकर धर्मके नामपर व्यभिचार, हिंसा आदि करते हों, उनको तो जब माँ चण्डीका भीषण दण्ड प्राप्त होगा, तभी उनके होश ठिकाने आयेंगे। दयामयी माँ अपनी भूली हुई संतानको क्षमा करें और उसे रास्तेपर लावें, यही प्रार्थना है।

बलिदान

इसके अतिरिक्त पञ्चमकारके नामपर भी बड़ा अन्याय-अनाचार हुआ तथा अब भी बहुत जगह हो रहा है, उससे भी सतर्कतासे बचना चाहिये। बलिदान तथा मद्यपान भी सर्वथा त्याज्य हैं। माताकी जो संतान, अपनी भलाईके लिये—मातासे ही अपनी कामना पूरी करानेके लिये, उसी माताकी प्यारी भोलीभाली संतानकी हत्या करके उसके खूनसे माँको पूजती है, जो माँके बच्चोंके खूनसे माँके मन्दिरको अपवित्र और कलङ्कित करता है, उसपर माँ कैसे प्रसन्न हो सकती है? माँ दुर्गा, काली जगज्जननी विश्वमाता हैं। स्वार्थी मनुष्य अपनी स्वार्थसिद्धिके लिये—धन-पुत्र, स्वार्थ-वैभव, सिद्धि या मोक्षके लिये भ्रमवश निरीह बकरे, भैंसे और अन्यान्य पशु-पक्षियोंके गलेपर छुरी फेरकर मातासे सफलताका वरदान चाहता है, यह कैसी असंगत और असम्भव बात है। निरपराध प्राणियोंकी नृशंसतापूर्वक हत्या करने-करानेवाला कभी सुखी हो सकता है? उसे कभी शान्ति मिल सकती है? कदापि नहीं। दयाहीन मांसलोलुप मनुष्योंने ही इस प्रकारकी प्रथा चलायी है। जिसका शीघ्र ही अन्त हो जाना चाहिये। जो दूसरे निर्दोष प्राणियोंकी गर्दन काटकर अपना भला मनायेगा, उसका यथार्थ भला कभी नहीं हो सकता। यह बात स्मरण रखनी चाहिये। ख्याल करो, तुम्हें खूँटेसे बाँधकर यदि कोई मारे

या तुम्हारे गलेपर छुरी फेरे तो तुम्हें कितना कष्ट होगा? नन्हीं-सी सुई या काँटा चुभ जानेपर ही तिलमिला उठते हो। फिर इस पापी पेटके लिये और राक्षसोंकी भाँति मांससे जीभको तृप्त करनेके लिये गरीब पशु-पक्षियोंको धर्मके नामपर— अरे, माताके भोगके नामपर मारते तुम्हें लज्जा नहीं आती? मानो उन्हें कोई कष्ट ही नहीं होता। याद रखो, वे सब तुम्हारा बदला लेंगे। और तब तुम्हें अपनी करनीपर निरुपाय होकर हायतौबा करना पड़ेगा। अतएव सावधान! माताके नामपर गरीब निरीह पशु-पक्षियोंको बलि देना तुरंत बंद कर दो, माताके पवित्र मन्दिरोंको उसीकी प्यारी संतानके खूनसे रँगकर माँके अकृपाभाजन मत बनो।

बलिदान करो

बलिदान जरूर करो, परंतु करो अपने स्वार्थका और अपने दोषोंका। माँके नामपर माँकी दुःखी संतानके लिये अपना न्यायोपार्जित धन दानकर धनका बलिदान करो; माँकी दुःखी संतानका दुःख दूर करनेके लिये अपने सारे सुखोंकी और अपने प्यारे शरीरकी भी बलि चढ़ा दो। न्योछावर कर दो निष्कामभावसे माँके चरणोंपर अपना सारा धन, जन, बुद्धि, बल, ऐश्वर्य, सत्ता और साधन उसकी दीन-हीन, दुःखी, दलित संतानको सुखी करनेके लिये। तुमपर माँकी कृपा होगी। माँके पुलकित हृदयसे जो आशीर्वाद मिलेगा, माँकी गद्‌गद वाणी तुम्हें अपने दुःखी भाइयोंकी सेवा करते देखकर जो स्वाभाविक वरदान देगी उससे तुम निहाल हो जाओगे। तुम्हारे लोक-परलोक दोनों बन जायँगे। तुम प्रेय और श्रेय दोनोंको अनायास पा जाओगे, माँ तुम्हें गोदमें लेकर तुम्हारा मुख चूमेंगी और फिर तुम कभी उनकी शीतल सुखद नित्यानन्दमय परमधाममय गोदसे नीचे नहीं उतरोगे।

बलिदान करना है तो बलि चढ़ाओ—कामकी, क्रोधकी, लोभकी, हिंसाकी, असत्यकी और इन्द्रियविषयासक्तिकी; माँ तुम्हारी इन चीजोंको नष्ट कर दे, ऐसी माँसे प्रार्थना करो। माँकी चरणरजरूपी तीक्ष्णधार-तलवारसे इन दुर्गुणरूपी असुरोंकी बलि चढ़ा दो। अथवा प्रेमकी कटारीसे ममत्व और अभिमानरूपी राक्षसोंकी बलि दे दो। तुम कहोगे 'फिर माँके हाथमें नरमुण्ड क्यों हैं? माँ भैंसेको क्यों मार रही हैं? माँ राक्षसोंका नाश क्यों कर रही हैं? क्या वे माँके बच्चे नहीं हैं? उन अपने बच्चोंकी बलि माँ क्यों स्वीकार करती हैं।' तुम इसका रहस्य नहीं समझते। उनकी बलि दूसरा कोई चढ़ाता नहीं, वे स्वयं आकर बलि चढ़ जाते हैं। अवश्य ही वे भी माँके बच्चे हैं, परंतु वे ऐसे दुष्ट हैं कि माँके दूसरे असंख्य निरपराध बच्चोंको दुःख देकर, उन्हें पीड़ा पहुँचाकर, उनका स्वत्व छीनकर, उनके गले काटकर स्वयं राजा बने रहना चाहते हैं। स्वयं माँ लक्ष्मीको अपनी

भोग्या बनाकर मातृगामी होना चाहते हैं, माँ उमासे विवाह करना चाहते हैं, ऐसे दुष्टोंको भी माँ मारना नहीं चाहती, शिवको दूत बनाकर उनके समझानेके लिये भेजती हैं; पर जब वे किसी प्रकार नहीं मानते, तब दयापरवश हो उनका उद्धार करनेके लिये उनको बलिके लिये आह्वान करती हैं और वे आकर जलती हुई आगमें पतंगको आश्वासन देने और ऐसे दुष्टोंको शासनमें रखनेके लिये ही मुण्डमाला धारण करती हैं। मारकर भी उनका उद्धार करती हैं। इन असुरोंकी इस बलिके साथ तुम्हारी आजकी यह स्वार्थपूर्ण बकरे और पक्षियोंकी निर्दयता और कायरतापूर्ण बलिसे कोई तुलना नहीं हो सकती। हाँ, यह तुम्हारा आसुरीपन, राक्षसीपन अवश्य है और इसका फल तुम्हें भोगना पड़ेगा। अतएव राक्षस न बनो, माँकी प्यारी, दुलारी संतान बनकर उनकी सुखद गोदमें चढ़नेका प्रयत्न करो।

किसीका बुरा न चाहो

रागद्वेषपूर्वक किसीका बुरा करनेके लिये माँकी आराधना कभी न करो। याद रखो, माँ तुम्हारे कहनेसे अपनी संतानका बुरा नहीं कर सकतीं। जो दूसरेका बुरा चाहेगा, उसकी अपनी बुराई होगी। स्त्री-वशीकरण, मारण, मोहन, उच्चाटन आदिके लिये भी उनको मत पूजो; उन्हें पूजो दैवीगुणोंकी उत्पत्तिके लिये, सबकी भलाईके लिये अथवा मोक्षके लिये।

केवल माँको ही चाहो

सच तो यह है, परमात्मरूपिणी माँकी उपासना करके उनसे कुछ भी मत माँगो। ऐसी दयामयी सर्वेश्वरी जननीसे जो कुछ भी तुम माँगोगे, उसीमें ठगे जाओगे। तुम्हारा वास्तविक कल्याण किस बातमें है—इस बातको तुम नहीं समझते, माँ समझती हैं। तुम्हारी दृष्टि बहुत ही छोटी सीमामें आबद्ध है। माँकी दूरदृष्टि ही नहीं है, वह ईश्वरी माता, वह श्रीकृष्ण और श्रीरामरूपा माता, वह दुर्गा, सीता, उमा, राधा, काली, तारा सर्वज्ञ हैं। तुम्हारे लिये जो भविष्य है, उनके लिये सभी वर्तमान है। फिर उनका हृदय दयाका अनन्त समुद्र है। वह दयामयी माता तुम्हारे लिये जो कुछ मङ्गलमय होगा—कल्याणकारी होगा, उसीका विधान करेंगी, स्वयं सोचेंगी और करेंगी, तुम तो बस, निश्चिन्त और निर्भय होकर अबोध शिशुकी भाँति उनका पवित्र आँचल पकड़े उनके वात्सल्यभरे मुखकी ओर ताकते रहो। डरना नहीं, काली, तारा तुम्हारे लिये भयावनी नहीं हैं, वह भयदायिनी राक्षसोंके लिये हैं। भगवान् नृसिंहदेव सबके लिये भयानक थे, परंतु प्रह्लादके लिये भयानक नहीं थे। फिर, मातृरूप तो कैसा भी हो, अपने बच्चेके लिये कभी भयावना होता ही नहीं, सिंहनीका बच्चा अपनी माँसे कभी

नहीं डरता। अतः उनकी गोदसे कभी न हटो, उनका आश्रय पकड़े रहो। माँ अपना काम आप करेंगी। माँगोगे, उसीमें धोखा खाओगे। पता नहीं, तुम्हें कहीं राज्य मिलनेकी बात सोची जा रही हो और तुम मोहवश कौड़ी ही माँग बैठो। असलमें तो तुम्हें माँगनेकी बात याद ही क्यों आनी चाहिये? तुम्हारे मनमें अभावका ही, कमीका ही बोध क्यों होना चाहिये, जब कि तुम त्रिभुवनेश्वरी अनन्त ऐश्वर्यमयी माँकी दुलारी संतान हो? माँका सारा खजाना तो तुम्हारा ही है। परंतु तुम्हें खजानेसे भी क्यों सरोकार होना चाहिये। छोटा बच्चा खजाने और धन-दौलतको नहीं जानता, वह तो जानता है केवल माँकी गोदको, माँके आँचलको और माँके दूधभरे स्तनोंको। बस, इससे अधिक उसे और क्या चाहिये। माँ बहुत ही मूल्यवान् वस्तु देकर भी उसे अपनेसे अलग करना चाहे तब भी वह अलग नहीं होगा। वह उस बहुमूल्य वस्तुको—भोग और मोक्षको तृणवत् फेंक देगा। परंतु माँका पल्ला कभी छोड़ना नहीं चाहेगा। ऐसी हालतमें राजराजेश्वरी सर्वलोकमहेश्वरी परम स्नेहमयी माँ भी उसे कभी नहीं छोड़ सकतीं। इसके सिवा शिशु-संतानको और क्या चाहिये? अतएव तुम भी माँके छोटे भोले-भाले बच्चे बन जाओ। खबरदार, कभी माँके सामने सयाने बननेकी कल्पना मनमें न आने पाये।

आत्मसमर्पणके द्वारा माँको स्नेहसूत्रमें बाँध लो

कुण्डलिनी और षट्चक्रोंकी बात सब ठीक है, शास्त्रसम्मत और रहस्यमय है, परंतु वर्तमान समयमें योगसाधन बड़ा कठिन है, उपयुक्त अनुभवी गुरु भी प्रायः नहीं मिलते। इस स्थितिमें योगके चक्करमें न पड़कर सरल शिशुपनसे आत्मसमर्पणभावसे उपासना करके माँको स्नेह-सूत्रमें बाँध लो। माँकी कृपासे सारी योगसिद्धियाँ तुम्हारे चरणोंपर बिना ही बुलाये आ-आकर लोटने लगेंगी। मुक्ति तो पीछे-पीछे फिरेगी, इस आशासे कि तुम उसे स्वीकार कर लो, परंतु तुम माताकी सेवामें ही सुख माननेवाले उसकी ओर नजर उठाकर ताकना भी नहीं चाहोगे।

परमसुखकी प्राप्ति

तुम्हें माँ विचित्र-विचित्र लीलाएँ दिखलायेंगी—अपनी लीलाका एक पात्र बना लेंगी। कभी तुम व्रजकी गोपी बनोगे तो कभी मिथिलाकी सीता-सखी; कभी उमाकी सहचरी बनोगे तो कभी माँ लक्ष्मीकी चिरसङ्गिनी सहेली; कभी सुदामा-श्रीदाम बनोगे तो कभी लक्ष्मण-हनुमान; कभी वीरभद्र-नन्दी बनोगे तो कभी नारद और सनत्कुमार और कभी चामुण्डा बनोगे तो कभी चण्डिका। मतलब यह है कि तुम माँकी विश्वमोहिनी लीलामें लीलारूप बन जाओगे—फिर तुम्हें मोक्षसे प्रयोजन ही नहीं रहेगा, क्योंकि मोक्षका अधिकार तो माँकी लीलासे अलग

रहनेवाले लोगोंको ही है। मोक्ष तुम्हारे लिये तरसेगा, परंतु तुमको महेश्वर-महेश्वरीका ताण्डव-लास्य, राधेश्यामका नाच-गान देखनेसे और डमरू-ध्वनि या मुरलीकी मधुर तान सुननेसे ही कभी फुरसत नहीं मिलेगी। इससे बढ़कर धन्य-जीवन और परम सुख और कौन-सा होगा?

मूर्ख और पापाचारी

माँकी कृपासे मिलनेवाले इस आत्यन्तिकसे भी परेके श्रेष्ठतम सुखको छोड़कर जो केवल सांसारिक रूप, धन और यशके फेरमें पड़ा रहता है और उन्हें पानेके लिये ही माँकी आराधना करता है वह तो बड़ा ही मूर्ख है। और वह तो अधम ही है, जो इन सुखोंके लिये माँकी पूजाके नामपर पापाचार करता है, जो इन सुखोंके लिये माँकी पूजाके नामपर पापाचार करता है और दूसरे प्राणियोंको पीड़ा पहुँचाकर लाभ उठाना चाहता है।

रूपका मोह छोड़ दो

सौन्दर्यकी—रूपकी धधकती आगमें पड़कर खाक हो जानेवाले पतंगे नर-नारियों! सोचो, तुम्हारी कल्पनाके रूपमें कहाँ सौन्दर्य है? हाड़, मांस, मेद, मज्जा, चमड़ी, विष्ठा, मूत्र, केश, नख आदिमें कौन-सी वस्तु सुन्दर है? क्या गठीला शरीर सुन्दर है? अरे, चार दिन खूनके पचास-पचास दस्त हो जायँ तो वह हड्डियोंका ढाँचा रह जायगा। काले केश सुन्दर हैं? बुढ़ापा आने दो, चाँदीकी-सी शक्ल उनकी हो जायगी। ऊपरकी चिकनाईमें सुन्दरता है तो अंदर देखो! पेटके थैलेमें और नसोंमें मल-मूत्र और रक्त भरा है, कीड़े किलबिला रहे हैं। कोढ़ीके शरीरके घावोंको देखो, वही तुम्हारे भीतरका असली नमूना है। देखते ही घिन होती है, नाक सिकुड़ जाती है, आँखें फिर जाती हैं। मरनेके बाद एक ही दिनमें शरीरसे असहनीय दुर्गन्ध निकलने लगती है। तुम क्यों इस लौकिक मिथ्या रूपकी झूठी कल्पनापर पागल हो रहे हो? रूपके मोहको छोड़ दो और उस अपरूप रूप-माधुरीका सेवन करो जो सारे रूपोंका अनन्त, सनातन और नित्य-समुद्र है।

धनका लोभ त्याग करो

यही हाल धनका है। संसारमें कौन-सा धनी शान्त है और सुखी है? धनकी लालसा कभी मिटती नहीं। ज्यों-ज्यों धन बढ़ेगा त्यों-ही-त्यों कामना और लालसा बढ़ेगी और त्यों-ही-त्यों दुःख भी बढ़ेगा। पाप, अभिमान आदि प्रायः धनसे ही होते हैं। खुशामदी, लुच्चे, बदमाश लोग धनपर ही, मैलेपर मक्खियोंकी भाँति मँडराया करते हैं और धनवानोंको सदा बुरे मार्गपर ले जानेकी कोशिश करते रहते हैं। धनवान्को असली महात्माका सत्संग मिलना तो बहुत

ही कठिन होता है; क्योंकि वह तो धनके मदमें कहीं जानेमें अपनी पोजीशनकी हानि समझता है, और खुशामदियों, चाटुकारों और चीनीपर चिपटी हुई चीटींकी भाँति धन चूसनेवाले लोगोंसे घिरे हुए उसके पास कोई निःस्वार्थी असली महात्मा क्यों जाने लगे? यदि कभी कोई कृपावश चले भी जाते हैं तो धनीसे उनका मिलना कठिन होता है और यदि मिलना भी हुआ तो वह उन्हें कोई भिखमंगा समझकर तिरस्कार करता है, क्योंकि उसके पास प्रायः ऐसे ही लोग आया करते हैं, इससे उसको सभी वैसे ही दिखायी देते हैं। झंझटोंका तो धनियोंके पार नहीं रहता, निकम्मे कामोंसे कभी उन्हें फुरसत ही नहीं मिलती। नरककी सामग्री-भोगोंका वहाँ बाहुल्य रहता है, जिससे नरकका मार्ग क्रमशः अधिकाधिक साफ होता रहता है, अतएव धनके लोभको छोड़ दो और परमधनरूप माँकी सेवामें लग जाओ। यदि पार्थिव-धन पास हो तो उसको अपना मानकर अभिमान न करो और कुसंगतिसे पिण्ड छुड़ाकर उस धनको माताकी पूजाकी सामग्री समझकर उसे माँकी यथार्थ पूजा—उसकी दुःखी संतानको सुख पहुँचानेके कार्यमें लगाकर माँके कृपा-भाजन बनो!

मान-बड़ाईमें मत फँसो

पद-प्रतिष्ठा और मान-बड़ाई तो बहुत ही हानिकर है। जो मान-बड़ाईके मोहमें फँस गया उसके धर्म, कर्म, साधना, पुरुषार्थ 'सब भाँगके भाड़ेमें' चले गये। उसने मानो परमधन परमात्म-प्रेमको विषपूर्ण स्वर्णकलशरूप मान-बड़ाईके बदलेमें खो दिया। अतएव रूप, धन, पद-प्रतिष्ठा, मान-बड़ाई आदिके लिये चिन्तित न होओ और न इनकी प्राप्ति चाहो। ये परमार्थका साधन नष्ट करनेवाले महान् दुःखदायी और नरकप्रद हैं। माँकी उपासना करके उसके बदलेमें तो इन्हें कभी माँगो ही मत। अमृतके बदले जहर पीनेके समान ऐसी मूर्खता कभी न करो। माँसे माँगो सच्चा प्रेम, माँका वात्सल्य, माँकी कृपा, माँका नित्य-आश्रय और माँकी सुखमयी गोद! माँसे माँगकर वैराग्यशक्ति ले लो और उससे विषयासक्तिरूप वैरीको मार भगाओ। याद रखो, वैराग्यशक्तिमें अद्भुत सामर्थ्य है। जिन विषयोंके प्रलोभनोंमें बड़े-बड़े धीर-वीर और विद्वान् पुरुष फँस जाते हैं, वैराग्यवान् पुरुष उनकी ओर ताकता भी नहीं।

सदाचार-शक्तिको बढ़ाओ

इसी प्रकार सदाचार-शक्ति और दैवीसम्पद्-शक्तिको बढ़ाओ। जिसकी सदाचार और दैवीसम्पद्-शक्ति जितनी बढ़ी हुई होगी, वह उतना ही अधिक परमात्मरूपा माँका प्रिय-पात्र होगा और उतना ही अधिक शीघ्र माँके दर्शनका अधिकारी होगा। स्मरण रखो, माँके विभिन्न रूप केवल कल्पना नहीं हैं, सत्य

हैं और तुम्हें माँकी कृपासे उनके साक्षात् दर्शन हो सकते हैं।

भगवान्‌को बाँधनेकी डोरी

माँके दर्शनका सर्वोत्तम उपाय है—दर्शनके लिये व्याकुल होना। जैसे छोटा बच्चा जब किसी वस्तुमें न भूलकर एकमात्र माँके लिये व्याकुल होकर रोने लगता है, केवल माँ-माँ पुकारता है और किसी बातको सुनना ही नहीं चाहता तब माँ दौड़ी आती है और उसके आँसू पोंछकर उसे तुरंत अपनी गोदमें छिपाकर मुँह चूमने लगती है। इसी प्रकार वे परमात्मरूपा जगज्जननी माँ काली या माँ श्रीकृष्ण भी तुम्हारा रोना सुनकर—पुकार सुनकर तुम्हारे पास आये बिना नहीं रहेंगे, अतएव उत्कण्ठित हृदयसे व्याकुल होकर रोओ— अपने करुणक्रन्दनसे करुणामयी माँके हृदयको हिला दो—पिघला दो। राम, कृष्ण, हरि, शंकर, दुर्गा, काली, तारा, राधा, सीता आदि नामोंकी निर्मल और ऊँची पुकारसे आकाशको गुँजा दो। भगवती माँ तुम्हें जरूर दर्शन देंगी। करुणापूर्ण नामकीर्तन माँको बुलानेका परम साधन है। समस्त मन्त्रोंमें यह नाममन्त्र मन्त्रराज है और इसमें कोई विधि-निषेध नहीं है, कोई भय नहीं है। हम सरीखे बच्चोंके लिये तो उस सच्चिदानन्दमयी भगवान्‌रूपी माँको बाँध रखनेकी, बस, यही एक मजबूत और कोमल रेशमकी डोरी है।

माँके उपदेशोंपर ध्यान दो

माँके उपदेशोंपर ध्यान दो। उनके सारे उपदेश तुम्हारी भलाईके लिये ही हैं। देवीभागवतमें ऐसे बहुत-से उपदेश हैं। भगवती गीता ऐसे उपदेशोंका सुन्दर संग्रह है। और न हो तो, माँके ही श्रीकृष्णरूपसे उपदिष्ट भगवद्गीताको माँके उपदेशोंका खजाना समझो—उसीको आदर्श बनाओ, पथ-दर्शक बनाओ, उसीके उज्ज्वल प्रकाशके सहारे माँका अनन्य आश्रय लिये हुए, माँके नामोंका रटन करते हुए माँको पुकारो—माँकी सेवा करो। गीताशक्तिमें भगवतीकी सारी शक्ति निहित है।

श्रद्धा-शक्ति

श्रद्धा-शक्तिको बढ़ाओ, झूठे तर्क न करो। तर्कोंसे कभी भगवान्‌की प्राप्ति नहीं हो सकती। माता-पिताके लिये तर्क करना उनका अपमान करना है। अतएव तर्क छोड़कर माँके भक्तोंकी वाणीपर विश्वास करो और श्रद्धापूर्वक माँकी सेवामें लगे रहो। इसका यह अर्थ नहीं है कि शुद्ध बुद्धि-शक्तिका तिरस्कार करो। जो भगवान्‌में अविश्वास उत्पन्न कराती है वह बुद्धि ही नहीं है, बुद्धि—शुद्ध बुद्धि तो वही है जिससे परमात्माका निश्चय होता है और भजनमें मन लगता है। ऐसी शुद्ध बुद्धि-शक्तिको बढ़ाओ। इस बुद्धि-शक्तिकी अधिष्ठात्री देवता सरस्वती

हैं; बुद्धिके साथ ही माँकी सेवाके लिये धन भी चाहिये—अतएव न्यायपूर्वक सत्य-शक्तिका आश्रय लिये हुए धनोपार्जन भी करो, धनकी अधिष्ठात्री देवता लक्ष्मीजी हैं। और साथ ही शारीरिक शक्तिका भी विकास करो, शरीरकी अधिष्ठात्री देवी कालीजी हैं। अतएव बुद्धि, धन और शरीरकी रक्षा और स्वस्थताके लिये महाशक्तिके त्रिरूप महासरस्वती, महालक्ष्मी और महाकालीकी श्रद्धापूर्वक उपासना करो, परंतु इस बातको स्मरण रखो कि बुद्धि, धन और शरीरकी आवश्यकता भी केवल माताकी निष्काम सेवाके लिये ही है, सांसारिक—इस लोक और परलोकके सुखोपभोगके लिये कदापि नहीं।

मानसिक शक्ति

मानसिक शक्तिको बढ़ाओ। तुम्हारी मानसिक शक्ति शुद्ध होकर बढ़ जायगी तो तुम इच्छामात्रसे जगत्का बड़ा उपकार कर सकोगे। शारीरिक शक्तिको बढ़ाओ, शरीर बलवान् और स्वस्थ रहेगा तो उसके द्वारा कर्म करके तुम जगत्की बड़ी सेवा कर सकोगे। इसी प्रकार बुद्धिको भी बढ़ाओ। शुद्ध प्रखर बुद्धिसे संसारकी सेवायें करनेमें बड़ी सुविधा होगी। इच्छा, क्रिया और ज्ञान अर्थात् मानसिक शक्ति, शारीरिक शक्ति और बुद्धि शक्ति तीनोंकी ही जगज्जनी माँकी सेवाके लिये आवश्यकता है। और माँसे ही यह तीनों मिल सकती हैं, परंतु इनका उपयोग केवल माँकी सेवाके लिये ही होना चाहिये। कहीं दुरुपयोग हुआ, कहीं भोग और पर-पीड़ाके लिये इनका प्रयोग किया गया तो सब शक्तियोंके मूलस्रोत महाशक्तिकी ईश्वरी-शक्ति इन सारी शक्तियोंका तुरंत हरण कर लेगी।

ईश्वरीय शक्तिकी प्रबलता

पशुबल, मानवबल, असुरबल और देवबल—ये चारों ही बल ईश्वरीय बल या शक्तिके सामने नहीं ठहर सकते। महिषासुरमें विशाल पशुबल था, कौरवोंमें मानवशक्तिकी प्रचुरता थी, रावणादिमें असुरबल अपार था और इन्द्रादि देवता देवबलसे सदा बलीयान् रहते हैं। परंतु ईश्वरीय शक्तिने चारोंको परास्त कर दिया। महिषासुरका साक्षात् ईश्वरीने वध किया, कौरवोंको भगवान् श्रीकृष्णके आश्रित पाण्डवोंने नष्ट कर दिया, रावणका भगवान् श्रीरामने स्वयं संहार किया और भगवान् श्रीकृष्णके तेजके सामने इन्द्रको हार माननी पड़ी। इन चारोंमें पशुबल और असुरबल तो सर्वथा त्याज्य हैं। मनुष्यबल और देवबल ईश्वराश्रित होनेपर ग्राह्य हैं। पर यथार्थ बल तो परमात्मबल है। वह बल समस्त जीवोंमें छिपा हुआ है। आत्मा परमात्माका सनातन अंश है। उस आत्माको जाग्रत् करो, आत्मबलका उद्बोधन करो, अपनेको जडशरीर मत समझो, चेतन विपुल शक्तिमान् आत्मा समझो। याद रखो, तुममें अपार शक्ति है। तुम्हारा अणु-अणु शक्तिसे भरा है। पुरुषार्थ करके

उस शक्तिके भंडारका द्वार खोल लो। अपनेको हीन, पापी समझकर निराश मत होओ। शक्तिमाताकी अपार शक्ति तुममें निहित है। उस शक्तिको जगाओ, शक्तिकी उपासना करो, शक्तिका समादर करो, शक्तिको क्रियाशील बनाओ। फिर शक्तिकी कृपासे तुम जो चाहो कर सकते हो।

नर-नारी सभी भगवान्‌के रूप हैं

तुम नर हो या नारी हो—भगवान् या भगवतीके रूप हो। नारी नरका अपमान न करे और नर नारीका कभी न करे। दोनोंको शुद्ध प्रेमभावसे एक-दूसरेकी यथार्थ उन्नति और सुखसाधनामें लगे रहना चाहिये। इसीमें दोनोंका कल्याण है। जगत्‌की सारी नारियोंमें देवी भगवतीकी भावना करो। समस्त स्त्रियोंको माँकी साक्षात् मूर्ति समझकर उनका आदर करो, उन्हें सुख पहुँचाओ, उन्हें भोग्य पदार्थ न समझकर माँ दुर्गा समझो। किसी भी नारीको कभी मत सताओ। शास्त्रोंमें कुमारी-पूजाका बड़ा माहात्म्य लिखा है। लड़कीको लड़केके समान ही बड़े आदरसे पालो, घरमें उसका भी स्वत्व समझो, उसे कभी दुत्कारो मत, उसका अपमान न करो।

माँ दुर्गाका अपमान

विलाससामग्रीका सब्जबाग दिखलाकर नारीको विलासमयी बनाना, भोगकी ओर प्रवृत्त करना और पवित्र सती-धर्मसे च्युत करना भी उसका अपमान ही है। नारीका अपमान माँ दुर्गाका अपमान है। इससे सावधान रहो।

विधवा नारीकी पूजा

विधवा नारीको तो साक्षात् दुर्गा समझकर उसका सम्मान करो। आदरपूर्वक हृदयसे उसकी पूजा करो; वह त्यागकी मूर्ति है। उसे विषयका प्रलोभन कभी मत दो, उसे ब्रह्मचर्यसे डिगाओ मत, सताओ मत, दु:खी मत करो; माँ विधवाके शापसे तुम्हारा सर्वनाश और उसके आशीर्वादसे तुम्हारा परम कल्याण हो सकता है।

नारी-शक्तिसे निवेदन

नारीजातिको विलासमें मत लगाओ, इससे नारी-शक्तिका ह्रास होगा, नारी-शक्ति उद्‌बोधन करो। हे नारीशक्ति! हे माँ! हे देवी! तुम भी सजग रहो, विलासी पुरुषोंके वाग्‌जालमें मत फँसो। संयम और त्यागके अपने परम पवित्र अति सुन्दर देव-पूज्य स्वरूपको कभी न छोड़ो। इन्द्र तुमसे काँपते थे, सूर्य तुम्हारी जबानपर रुक जाते थे, ब्रह्मा, विष्णु, महेश तुम्हारे सामने शिशु होकर खेलते थे, रावण-से दुर्वृत्त राक्षस तुमसे थर्राते थे। तुम साक्षात् भगवती हो। संयम और त्यागको भूलकर भी न छोड़ो। पुरुषोंके मिथ्या प्रलोभनोंमें मत फँसो। उनको सावधान

कर दो। आज विवाह और कल सम्बन्धत्याग, इस पातकी आदर्शको कभी न अपनाओ। तुम्हें जो ऐसा करनेको कहते हैं वे तुम्हारा अपमान करते हैं। जीवनकी अखण्ड पवित्रताको दृढ़तापूर्वक सुरक्षित रखो। संसारके मिथ्या सुखोंमें कभी न भूलो। अपनी शक्तिको प्रकट करो। त्याग, प्रेम, शौर्य और वात्सल्यकी सबको शिक्षा दो। जो तुम्हारी भक्ति करे, तुम्हें देवीके रूपमें देखे, उसके लिये लक्ष्मी और सरस्वती बनकर उसका पालन करो। और जो दुष्ट तुम्हारी ओर बुरी नजर करे, उसके लिये साक्षात् रणरङ्गिणी काली और चण्डिकास्वरूप प्रकाश करो, जिससे तुम्हें देखते ही वह डर जाय—उसके होश ठिकाने आ जायँ।

माँ सबका कल्याण करें

शक्ति ही जीवन है, शक्ति ही धर्म है, शक्ति ही गति है, शक्ति ही आश्रय है, शक्ति ही सर्वस्व है, यह समझकर परमात्मरूपा महाशक्तिका अनन्यरूपसे आश्रय ग्रहण करो। परंतु किसी भी दूसरेकी इष्टशक्तिका अपमान कभी न करो। गरीब दुःखी प्राणियोंकी अपनी शक्तिभर तन-मन-धनसे सेवा कर महाशक्तिकी प्रसन्नता प्राप्त करो। पापाचार, अनाचार, व्यभिचार, लौकिक पंचमकार आदिको सर्वथा त्यागकर माताकी विशुद्ध निष्काम भक्ति करो। इसीमें अपना कल्याण समझो। मेरी माँ दुर्गा सबका कल्याण करें।

****

(७)

देवीका विराट् स्वरूप

एक बार गिरिराजजी हिमालयकी प्रार्थनासे श्रीभगवतीजीने अपना विराट् रूप उन्हें दिखाया। उस समय विष्णु आदि सभी देवता वहाँ उपस्थित थे। उस विराट् रूपका स्वर्गलोक मस्तक और चन्द्रमा तथा सूर्य नेत्र थे। दिशाएँ कान, वेद वाणी और पवन प्राण थे। हृदय विश्व था और जङ्घा पृथ्वी। व्योममण्डल उसकी नाभि तथा नक्षत्र-वृन्द वक्षःस्थल थे। महर्लोक कण्ठ और जनलोक मुख था। इन्द्र आदि देवता उस महेश्वरीके बाहु थे और शब्द ही श्रवण। दोनों अश्विनीकुमार उसकी नासिका थे, गन्ध घ्राणेन्द्रियाँ थीं। मुख अग्नि और पलकें दिवारात्रि थीं। ब्रह्मधाम भ्रूविलास था और जल तालु। रस ही रसना तथा यम ही दंष्ट्रा थे। स्नेहकला दाँत थी और माया थी हँसी। सृष्टि ही कटाक्ष-विक्षेप तथा लज्जा ही होठ थी। लोभ अधर थे और धर्मपथ था पीठ। इस जगतीतलमें जो सृष्टिकर्ताके रूपसे विख्यात हैं, वे प्रजापति ही उस देवीके मेढ्र थे। समुद्र उदर, पर्वत अस्थि, नदी नाड़ी तथा वृक्ष ही उसके केश थे। कौमार, यौवन और जरावस्था उसकी उत्तम गति थी। मेघ ही केश और दोनों संध्याएँ वस्त्र थीं। चन्द्रमा ही जगदम्बाके मन थे, विज्ञानशक्ति विष्णु और अन्तःकरण रुद्र थे। अश्व आदि जातियाँ उस व्यापक परमेश्वरीके नितम्बके निम्न भागमें स्थित थीं। अतल आदि महीलोक उसकी कटिके अधोभाग थे। देवताओंने देवीके ऐसे महान् रूपका दर्शन किया, जो सहस्त्रों ज्वाला-मालाओंसे पूर्ण था और लपलपाती हुई जीभसे अपना ही बदन चाट रहा था। उसकी दाढ़ोंसे कट-कट शब्द होते थे और आँखें आग उगल रही थीं। नाना शस्त्रोंको धारण करनेवाला वीर-वेष था; उसके सहस्त्रों मस्तक, नेत्र तथा चरण थे। करोड़ों सूर्य और कोटि विद्युन्मालाओंके समान उसकी देदीप्यमान कान्ति थी। वह महाघोर भीषण रूप हृदय तथा नेत्रोंको आतङ्क पहुँचानेवाला था।

उसे देखते ही सभी देवता हाहाकार मचाने लगे, सबके हृदय कम्पित हो गये और बेसुध हो गये। उन्हें इतना भी स्मरण न रहा कि ये जगज्जननी देवी हैं।

महेश्वरीके चारों ओर जो वेद मूर्तिमान् होकर खड़े थे, उन्होंने ही देवताओंको मूर्च्छासे जगाया। होशमें आनेपर वे नेत्रोंमें प्रेमाश्रु भरकर गद्गद कण्ठसे स्तवन

करने लगे।

स्तुति समाप्त होनेपर उन्हें भयभीत जानकर देवीने परम सुन्दर रूप धारण करके सान्त्वना दी। (देवीभागवतके आधारपर)

श्रीजगज्जननी उमाका ध्यान

जिनकी देहकान्ति स्वर्णके समान सुन्दर है, जिनके बायें हाथमें नीलपद्म है और दाहिने हाथमें अत्यन्त श्वेतवर्ण चामर है, उन उमा देवीका ध्यान करना चाहिये।

श्रीभुवनेश्वरी देवीका ध्यान

जिनकी प्रातःकालीन सूर्यकिरणके सदृश देहकान्ति है, जिनके ललाटपर अर्धचन्द्र-मुकुट सुशोभित है, जिनका विशाल वक्षःस्थल है, जिनके तीन नेत्र हैं और जो मन्द-मन्द मुस्करा रही हैं, जिनके चारों हाथ वरमुद्रा, अङ्कुश, पाश और अभयमुद्रासे सुशोभित हो रहे हैं, उन श्रीभुवनेश्वरी देवीका ध्यान करना चाहिये।

****

(८)
श्रीदुर्गाजीका नाम

श्रीदुर्गाजीका 'दुर्गा' नाम ही ढाई अक्षरका है। इसका जप आप हर समय कर सकते हैं। प्रतिदिन स्नान-सन्ध्या आदिसे निवृत्त होकर एक आसनपर बैठकर मालाद्वारा जप करना चाहिये। जितना आप अधिक-से-अधिक प्रेमपूर्वक जप कर सकें, उतना ही अच्छा है—'**अधिकस्याधिकं फलम्।**' इसके जपकी कोई नियमित संख्या या विशेष विधि नहीं है।

'सरस्वती' का बीज-मन्त्र 'ऐं' है। यह सबसे छोटा मन्त्र है। सरस्वतीजीका ध्यान करते हुए इस मन्त्रका जप करनेसे उनकी कृपा प्राप्त होती है। श्रीदेवीभागवतमें इसकी बड़ी महिमा बतायी गयी है। सुदर्शनने इसी जपसे सरस्वतीका प्रत्यक्ष दर्शन और दुर्लभ वरदान प्राप्त किया था।

प्रत्येक कामनाकी पूर्ति करनेवाले हैं स्वयं श्रीभगवान्; अतः प्रेमपूर्वक उन्हींका नाम जपना चाहिये—

अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः
तीव्रेण भक्तियोगेन यजेत पुरुषं परम्॥

(श्रीमद्भा० २। ३। १०)

अर्थात् 'कोई कामना न हो, अथवा सब प्रकारकी कामनाएँ हों या मोक्षमात्रकी अभिलाषा हो, मनुष्य तीव्र भक्तियोगके द्वारा परम पुरुष भगवान्‌की आराधना करे। अतः प्रत्येक कामनाकी पूर्तिका उपाय है—भगवान्‌की अटल शक्ति और भगवान्‌के नामोंका निरन्तर जप।'

****

(९)

कुछ उपयोगी मन्त्र और उनके जपकी विधि

शास्त्रोंमें भगवत्प्रेम एवं चारों पुरुषार्थ प्राप्त करनेके लिये अनेकों मन्त्रोंका वर्णन हुआ है। मन्त्रोंके द्वारा भोग-मोक्ष, एवं भगवत्प्रेमकी सिद्धि हो सकती है। मन्त्रोंमें कौन-सी ऐसी शक्ति है जिसके द्वारा साधकोंको सिद्धिलाभ होता है इसकी चर्चा यहाँ प्रासंगिक नहीं है। यहाँ तो केवल कुछ मन्त्रोंकी जपविधि लिखी जाती है। जिनकी श्रद्धा हो, विश्वास हो वे किसीसे सलाह लेकर इनका अनुष्ठान कर सकते हैं। हाँ, इतनी बात दावेके साथ कही जा सकती है कि इन मन्त्रोंमें दैवी शक्ति है। अभिलाषा पूर्ण करनेकी अद्भुत शक्ति है। यदि सम्पूर्ण कामनाओंको छोड़कर निष्कामभावसे इनका जप किया जाय तो ये शीघ्र-से-शीघ्र अन्तःकरण शुद्ध कर देते हैं और भगवान्‌की सन्निधिका परमानन्द अनुभव कराने लगते हैं।

प्रायः बहुत-से लोग अपनी कुलपरम्पराके अनुसार अपने कुल-गुरुओंसे दीक्षा ग्रहण करते हैं। समयके प्रभावसे अथवा अशिक्षा आदि अन्य कारणोंसे आजकलके गुरुजनोंमें भी अधिकांश मन्त्रविधिसे अनभिज्ञ ही होते हैं। उनसे दीक्षा पाये हुए शिष्योंके मनमें यदि विधिपूर्वक मन्त्रानुष्ठानकी इच्छा हो तो वे इस विधिके अनुसार जप कर सकते हैं। इस स्तम्भमें क्रमशः कई मन्त्रोंकी चर्चा होगी।

(१)

मन्त्रोंमें वासुदेव द्वादशाक्षर मन्त्र बहुत ही प्रसिद्ध है। इसीके जपसे ध्रुवको बहुत शीघ्र भगवान्‌के दर्शन हुए थे। पुराणोंमें इसकी महिमा भरी है। इसका स्वरूप है **'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।'** प्रातःकृत्य सन्ध्या-वन्दन आदिसे निवृत्त होकर इसका जप करना चाहिये। पवित्र आसनपर बैठकर तुलसी, रुद्राक्ष अथवा पद्मकाष्ठकी मालाके द्वारा इसका जप किया जा सकता है। इसकी विधिका विस्तार तो बहुत है परन्तु यहाँ संक्षेपमें लिखा जाता है। मन्त्रजपके पहले ऋषि, देवता और छन्दका स्मरण करना चाहिये। इस मन्त्रके ऋषि प्रजापति हैं, छन्द गायत्री है और देवता वासुदेव हैं। इनका यथास्थान न्यास करना चाहिये। जैसे सिरका स्पर्श करते हुए **'शिरसि प्रजापतये ऋषये नमः'।** मुखका स्पर्श करते हुए **'मुखे गायत्रीछन्दसे नमः'**। हृदयका स्पर्श करते हुए 'हृदि वासुदेवाय देवतायै नमः'।

इसके बाद करन्यास और अंगन्यास करना चाहिये। जैसे **'ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' 'ॐ नमः तर्जनीभ्यां स्वाहा' 'ॐ भगवते मध्यमाभ्यां वषट्' 'ॐ वासुदेवाय अनामिकाभ्यां हुम्' 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय कनिष्ठाभ्यां फट्'** इस प्रकार करन्यास करके इसी क्रमसे अंगन्यास भी करना चाहिये।

ॐ हृदयाय नमः।

ॐ नमः शिरसे स्वाहा।

ॐ भगवते शिखायै वषट्।

ॐ वासुदेवाय कवचाय हुम्।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय अस्त्राय फट्।

हो सके तो सिर, ललाट, दोनों आँखें, मुख, गला, बाहु, हृदय, कोख, नाभि, गुह्यस्थान, दोनों जानु और दोनों पैरोंमें मन्त्रके बारहों अक्षरोंका न्यास करना चाहिये। इस प्रकार न्यास करनेसे सारा शरीर मन्त्रमय बन जाता है। सारी अपवित्रता दूर हो जाती है और मन अधिक एकाग्रताके साथ इष्टदेवके चिन्तनमें लग जाता है।

इसके पश्चात् मूर्ति-पञ्जरन्यासकी विधि है।

ललाटे—**ॐ अं केशवाय धात्रे नमः।**

कुक्षौ—**ॐ नम् आम् नारायणाय अर्यम्णे नमः।**

हृदि—**ॐ मोम् इम् माधवाय मित्राय नमः।**

गलकूपे—**ॐ भम् ईम् गोविन्दाय वरुणाय नमः।**

दक्षपार्श्वे—**ॐ गम् उम् विष्णवे अंशवे नमः।**

दक्षिणांसे—**ॐ वम् ऊम् मधुसूदनाय भगाय नमः।**

गलदक्षिणभागे—**ॐ तेम् एम् त्रिविक्रमाय विवस्वते नमः।**

वामपार्श्वे—**ॐ वाम् ऐम् वामनाय इन्द्राय नमः।**

वामांसे—**ॐ सुम् ओम् श्रीधराय पूष्णं नमः।**

गलवामभागे—**ॐ देम् औम् हृषीकेशाय पर्जन्याय नमः।**

पृष्ठे—**ॐ वाम् अम् पद्मनाभाय त्वष्ट्रे नमः।**

ककुदि—**ॐ यम् अः दामोदराय विष्णवे नमः।**

इस मूर्ति-पञ्जर-न्यासके द्वारा अपने सर्वांगमें भगवन्मूर्तियोंकी स्थापना करके किरीटमन्त्रसे व्यापक न्यास करते हुए भगवान्को नमस्कार करना चाहिये। किरीटमन्त्र यह है—

किरीटकेयूरहारमकरकुण्डलशङ्खचक्रगदाम्भोजहस्तपीताम्बरधरश्रीवत्साङ्कितवक्षः-स्थलश्रीभमिसहितस्वात्मज्योतिर्मयदीप्तकराय सहस्त्रादित्य तेजसे नमः।

इसके पश्चात् ॐ नमः सुदर्शनाय अस्त्राय फट्। इस मन्त्रसे दिग्बन्ध करके यह भावना करे कि भगवान्‌का सुदर्शन चक्र चारों ओरसे मेरी रक्षा कर रहा है। मेरा शरीर और मन पवित्र हो गया है, मेरे ध्यान और जपमें किसी प्रकारकी बाधा नहीं पड़ेगी। मेरे चारों ओर मेरे शरीरमें और मेरे हृदयमें भी भगवान्‌के ही दर्शन हो रहे हैं। इस प्रकारकी भावनामें तन्मय हो जाना चाहिये। इस मन्त्रका ध्यान इस प्रकार बतलाया गया है।

विष्णुं शारचन्द्रकोटिसदृशं शङ्खं रथाङ्गं गदा-
मम्भोजं दधतं सिताब्जनिलयं कान्त्या जगन्मोहनम्।
आबद्धाङ्गदहारकुण्डलमहामौलिं स्फुरत्कङ्कणं
श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं वन्दे मुनीन्द्रैः स्तुतम्॥

भगवान् वासुदेवका श्रीविग्रह शरत्कालीन करोड़ों चन्द्रमाओंके समान समुज्ज्वल शीतल एवं मधुर है। वे अपनी चारों भुजाओंमें शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुए हैं। वे श्वेत कमलपर विराजमान हैं और उनकी शरीरकान्तिसे तीनों लोक मोहित हो रहे हैं। वे बाजूबन्द, हार, कुण्डल, किरीट और कङ्कण आदि नाना अलंकारोंसे अलंकृत हैं। उनके वक्षःस्थलपर श्रीवत्स चिह्न है और कण्ठमें कौस्तुभमणि शोभा पा रही है। बड़े-बड़े ऋषि-मुनि सामस्वरसे उनकी स्तुति कर रहे हैं। ऐसे वासुदेव भगवान्‌की मैं वन्दना करता हूँ। ध्यानमें भगवान्‌की षोडशोपचारसे पूजा करनी चाहिये। मानसपूजाके पश्चात् दक्षिणामें सर्वतोभावेन आत्मसमर्पण कर देना चाहिये। भगवान्‌से प्रार्थना करनी चाहिये कि 'हे प्रभो! यह शरीर, प्राण, इन्द्रिय, मन, बुद्धि और आत्मा जो कुछ मैं हूँ अथवा जो कुछ मेरा है, सब तुम्हारा ही है। भ्रमवश इसे मैंने अपना मान लिया था और अपनेको तुमसे पृथक् कर बैठा था। अब ऐसी कृपा कीजिये कि जैसा मैं तुम्हारा हूँ वैसा ही तुम्हारा स्मरण रक्खा करूँ। कभी एक क्षणके लिये भी तुम्हें न भूलूँ। तुम्हारा भजन हो, तुम्हारे मन्त्रका जप हो और तुम्हारा ही चिन्तन हो। मैं एकमात्र तुम्हारा ही हूँ।'

समय, रुचि और श्रद्धा हो तो बाह्य उपचारोंसे भी भगवान्‌की पूजा करनी चाहिये। उसके पश्चात् स्मरण करते हुए द्वादशाक्षर मन्त्रका जप करना चाहिये। जप करते समय माला किसीको दिखनी नहीं चाहिये। तर्जनीसे मालाका स्पर्श नहीं होना चाहिये। मन्त्र दूसरेके कानमें नहीं पड़ना चाहिये। बारह लाखका एक अनुष्ठान होता है। अन्तमें दशांश हवन करनेकी विधि है और उसका दशांश तर्पण तथा तर्पणका दशांश ब्राह्मणभोजन है। यदि हवन आदि करनेकी शक्ति और सुविधा न हो तो जितना हवन करना हो उसका चौगुना जप और करना

चाहिये। इस विधिके अनुसार श्रद्धापूर्वक यम-नियमका पालन करते हुए अनुष्ठान करनेसे अवश्य-अवश्य मनोवाञ्छित फलकी सिद्धि होती है। भगवान्‌के दर्शनकी लालसा करनेपर भगवान् वासुदेवके दिव्य दर्शन हो सकते हैं। और निष्कामभावसे केवल भगवत्प्रीत्यर्थ करनेसे भगवत्प्रेम या मोक्षकी प्राप्ति होती है।

(२)

'**ॐ नमो नारायणाय।**' यह अष्टाक्षर मन्त्र बहुत ही प्रसिद्ध है। यह सिद्ध मन्त्र है, इसके जपसे अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष चारों पुरुषार्थ सिद्ध होते हैं। अन्तःकरण शुद्ध होता है, कृपा करके भगवान् दर्शन देते हैं और भगवत्प्रेमकी उपलब्धि होती है। अनेकों महापुरुषोंको इसके जपसे भगवान्‌के साक्षात् दर्शन हुए हैं। स्नान, सन्ध्या आदिसे निवृत्त होकर पवित्रताके साथ एक आसनपर बैठकर इसका जप किया जाता है। बोलकर जप करनेकी अपेक्षा मन-ही-मन जप करना अच्छा है। जपके पूर्व वैष्णवाचमन करनेकी विधि है। वैष्णवाचमनकी विधि इस प्रकार है—

ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ माधवाय नमः, इन मन्त्रोंसे दाहिने हाथको गौके कानके समान करके एक-एक बूँद जल तीन बार पीवे।

ॐ गोविन्दाय नमः, ॐ विष्णवे नमः, इनसे हाथ धोवे। ॐ मधुसूदनाय नमः, ॐ त्रिविक्रमाय नमः, इनसे दोनों अँगूठे धो ले। **ॐ वामनाय नमः, ॐ श्रीधराय नमः,** इनसे मुख धोवे। **ॐ हृषीकेशाय नमः,** इससे हाथ धोवे। **ॐ पद्मनाभाय नमः,** इससे पैरोंपर जल छिड़के। **ॐ दामोदराय नमः,** इससे सिर पोंछ ले। **ॐ संकर्षणाय नमः,** इससे मुँहका स्पर्श करे। **ॐ वासुदेवाय नमः, ॐ प्रद्युम्नाय नमः,** इनसे अँगूठा तर्जनीके द्वारा नाकका स्पर्श करे। **ॐ अनिरुद्धाय नमः ॐ पुरुषोत्तमाय नमः,** इनसे अंगूठा और अनामिकाके द्वारा दोनों आँखोंका स्पर्श करे। **ॐ अधोक्षजाय नमः, ॐ नृसिंहाय नमः,** इनसे अँगूठा और अनामिकाके द्वारा दोनों कानोंका स्पर्श करे। **ॐ अच्युताय नमः,** इससे अँगूठा और कनिष्ठिकाके द्वारा नाभिका स्पर्श करे। **ॐ जनार्दनाय नमः** इससे हथेलीसे हृदयका स्पर्श करे। **ॐ उपेन्द्राय नमः,** इससे अँगुलियोंके अग्रभागसे सिरका स्पर्श करे। **ॐ हरये नमः, ॐ विष्णवे नमः,** इनसे दोनों हाथ टेढ़े करके एक दूसरेका पखुरा (कवच) स्पर्श करे।

श्रद्धापूर्वक किये हुए इस वैष्णवाचमनसे बाह्य और अन्तरके मल धुल

जाते हैं और अभ्यास हो जानेपर सर्वत्र भगवान् नारायणका स्पर्श प्राप्त होने लगता है। इसके बाद सामान्य अर्घ्यदानसे लेकर मातृकान्यासपर्यन्त विधि हो सके तो करनी चाहिये और केशवकीर्त्यादिन्यास भी करना चाहिये। केशवकीर्त्यादिन्यास है तो कुछ लम्बा परन्तु बड़ा ही लाभदायक है। यह न्यास सिद्ध हो जाय तो साधक बहुत शीघ्र सफलमनोरथ हो जाता है। वह पवित्रताकी चरम सीमापर पहुँच जाता है। इस न्यासमें अँगुलियोंका नियम भी है इसलिये मन्त्रोंके साथ है। एकसे पाँचतककी संख्याएँ भी लिख दी जाती हैं, वह अँगुलियोंका निर्देश है। १ को अँगूठा और ५ को कनिष्ठिका समझना चाहिये। जहाँ २,३ संख्याएँ एक साथ ही हों वहाँ उन सब अँगुलियोंसे एक साथ ही स्पर्श करना चाहिये। (जिन्हें किसी सांसारिक पदार्थोंकी कामना हो, उन्हें प्रत्येक न्यासमन्त्रमें ॐ के पश्चात् 'श्रीं' जोड़ लेना चाहिये।)

ललाटमें—**ॐ अं केशवाय कीर्त्यै नमः। १,४।**

मुखमें— **ॐ आं नारायणाय कान्त्यै नमः। २,३,४।**

दाहिने नेत्रमें—**ॐ इं माधवाय तुष्ट्यै नमः। १,४।**

बायें नेत्रमें—**ॐ ईं गोविन्दाय पुष्ट्य नमः। १,४।**

दाहिने कानमें—**ॐ उं विष्णवे धृत्यै नमः। १।**

बायें कानमें—**ॐ ऊं मधुसूदनाय शान्त्यै नमः। १।**

दाहिनी नाकमें—**ॐ ऋं त्रिविक्रमाय क्रियायै नमः। १,५।**

बायीं नाकमें—**ॐ ॠं वामनाय दयायै नमः। १,५।**

दाहिने गालपर—**ॐ लृं श्रीधराय मेधायै नमः। २,३,४।**

बायें गालपर—**ॐ लॄं हृषीकेशाय हर्षायै नमः। २,३,४।**

ओठमें—**ॐ एं पद्मनाभाय श्रद्धायै नमः। ३।**

अधरमें—**ॐ ऐं दामोदराय लज्जायै नमः। ३।**

ऊपरके दाँतोंमें—**ॐ ओं वासुदेवाय लक्ष्म्यै नमः। ३।**

नीचेके दाँतोंमें—**ॐ औं संकर्षणाय सरस्वत्यै नमः। ३।**

मस्तकमें—**ॐ अं प्रद्युम्नाय प्रीत्यै नमः। ३।**

मुखमें—**ॐ अः अनिरुद्धाय रत्यै नमः। २,४।**

बाहुमूलसे लेकर—**ॐ कं चक्रिणे जयायै नमः, ॐ खं**
अँगुलीतक **गदिने दुर्गायै नमः, ॐ गं शार्ङ्गिणे**
(दाहिने) प्रभायै नमः, ॐ घं खड्गिने सत्यायै नमः, ॐ ङं शङ्खिने
चण्डायै नमः। ३,४,५।

बाहुमूलसे लेकर—**ॐ चं हलिने वाण्यै नमः, ॐ छं**

अँगुलीतक (बायें) **मुशलिने विलासिन्यै नमः**

ॐ जं शूलिने विजयायै नमः, ॐ झं पाशिने विरजायै नमः,

ॐ ञं अङ्कुशिने विश्वायै नमः। १।

पादमूलसे लेकर—**ॐ टं मुकुन्दाय विनदायै नमः,**

अँगुलियोंतक (दाहिने)—**ॐ ठं नन्दजाय सुनन्दायै नमः, ॐ डं नन्दिने स्मृत्यै नमः, ॐ ढं नराय ऋद्ध्यै नमः, ॐ णं नरकजिते समृद्ध्यै नमः। १।**

पादमूलसे लेकर—**ॐ तं हरये शुद्ध्यै नमः, ॐ थं**

अँगुलियोंतक (बायें)—**कृष्णाय बुद्ध्यै नमः, ॐ दं सत्याय भक्त्यै नमः, ॐ धं सात्वताय मत्यै नमः, ॐ नं शौरये क्षमायै नमः। १।**

दाहिनी बगलमें—**ॐ पं शूराय रमायै नमः। १।**

बायीं बगलें—**ॐ फं जनार्दनाय उमायै नमः। १।**

पीठमें—**ॐ बं भूधराय क्लेदिन्यै नमः। १।**

नाभिमें—**ॐ भं विश्वमूर्त्त्यै क्लिन्नायै नमः। २,३,४,५।**

पेटमें—**ॐ मं वैकुण्ठाय वसुदायै नमः। १,५।**

हृदयमें—**ॐ यं त्वगात्मने पुरुषोत्तमाय वसुधायै नमः। १,५।**

दाहिने कंधेपर—**ॐ रं असृगात्मने बलिने परायै नमः १,५।**

गर्दनपर—**ॐ लं मांसात्मने बलानुजाय परायणायै नमः। १,५।**

बायें कंधेपर—**ॐ वं मेदात्मने बालाय सूक्ष्मायै नमः। १,५।**

हृदयसे लेकर दाहिने—**ॐ शं अस्थ्यात्मने वृषघ्नाय**

हाथतक—**सन्ध्यायै नमः। १-५।**

हृदयसे लेकर बायें हाथतक—**ॐ षं मज्जात्मने वृषाय प्रज्ञायै नमः। १,५।**

हृदयसे लेकर दाहिने पैर तक—**ॐ सं शुक्रात्मने हंसाय प्रभायै नमः। १,५**

हृदयसे लेकर पैरतक—**ॐ हं प्राणात्मने वराहाय निशायै नमः। १,५।**

हृदयसे पेटतक—**ॐ लं जीवात्मने विमलाय अमोघायै नमः। १,५।**

हृदयसे लेकर मुखतक—**ॐ क्षं क्रोधात्मने नृसिंहाय विद्युतायै नमः। १,५।**

इनका यथास्थान न्यास करके ऐसा ध्यान करना चाहिये कि मेरे स्पर्श किये हुए अंगोंमें, शंख, चक्र, गदा, पद्मधारी श्यामवर्णके भगवान् नारायण पृथक्-पृथक् विराजमान हैं। उनके साथ वर्षाकालीन बादलमें चमकती हुई बिजलीके समान उनकी पृथक्-पृथक् शक्तियाँ शोभायमान हो रही हैं। कभी-कभी उनकी मुस्कुराहटसे दाँत दिख जाते हैं और बड़ा ही सुन्दर सुखद शीतल प्रकाश चारों ओर फैल जाता है। मेरे शरीरमें रोम-रोममें भगवान् विष्णुका निवास है। मेरे

हृदयकी एक-एक वृत्तियोंसे भगवान् नारायणका साक्षात् सम्बन्ध है। मेरा हृदय पवित्र हो गया है अब इसमें स्थायीरूपसे भगवान् विष्णुके दर्शन हुआ करेंगे। अब पाप, अपवित्रता और अशान्ति मेरा स्पर्श नहीं कर सकती। इस न्यासके फलमें बतलाया गया है कि यह केशवादिन्यास न्यासमात्रसे ही साधकको अच्युत बना देता है अर्थात् वह किसी भी विघ्नके कारण साधनासे च्युत नहीं होता। भगवान्के चिन्तनमें तल्लीन होकर भगवन्मय हो जाता है।

इसके बाद नारायण अष्टाक्षर मन्त्रके जपका विनियोग करना चाहिये। हाथमें जल लेकर ॐ नारायणाष्टाक्षरमन्त्रस्य प्रजापति ऋषिः गायत्री छन्दः अर्धलक्ष्मीहरिर्देवता भगवत्प्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। जल छोड़ दें। प्रजापति ऋषिका सिरमें, गायत्री छन्दका मुखमें और अर्धलक्ष्मीहरिदेवताका हृदयमें न्यास कर लें। नारायण अष्टाक्षर मंत्रका न्यास केवल श्रीबीजसे ही होता है। जैसे 'ॐ श्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।' 'ॐ श्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा' इत्यादि। करन्यासकी भाँति ही अंगन्यास भी कर लेना चाहिये। इसका ध्यान बड़ा ही सुन्दर है—

उद्यत्प्रद्योतनशतरुचिं तप्तहेमावदातं
पार्श्वद्वन्द्वे जलधिसुतया विश्वधात्र्या च जुष्टम्।
नानारत्नोल्लसितविविधाकल्पमापीतवस्त्रं
विष्णुं वन्दे दरकमलकौमोदकीचक्रपाणिम्॥

'भगवान् विष्णु उगते हुए सैकड़ों सूर्यके समान अत्यन्त तेजस्वी, तपाये हुए सोनेकी भाँति अंगकान्तिवाले और दोनों ओर लक्ष्मी एवं पृथ्वीके द्वारा सेवित हैं। अनेकों प्रकारके रत्नजटित आभूषणोंसे भूषित हैं एवं फहराते हुए पीताम्बरसे परिवेष्टित हैं। चार हाथोंमें शंख, चक्र, गदा और पद्म शोभायमान हो रहे हैं और मन्द-मन्द मुस्कुराते हुए मेरी ओर देख रहे हैं। ऐसे भगवान् विष्णुकी मैं वन्दना करता हूँ।' इस प्रकारका ध्यान जब जम जाय तब मानस पूजा करनी चाहिये। मानस पूजामें ऐसी भावना की जाय कि सम्पूर्ण जलतत्त्वके द्वारा मैं भगवान्के चरण पखार रहा हूँ और सम्पूर्ण रसतत्त्वके द्वारा उन्हें रसीले व्यञ्जन अर्पण कर रहा हूँ, सम्पूर्ण पृथ्वीतत्त्वका आसन और सम्पूर्ण गन्धतत्त्वकी दिव्य सुगन्ध निवेदन कर रहा हूँ। सम्पूर्ण अग्नितत्त्वका दीपदान एवं आरति कर रहा हूँ तथा सम्पूर्ण रूपतत्त्वसे युक्त वस्त्राभूषण भगवान्को पहना रहा हूँ। सम्पूर्ण वायुतत्त्वसे भगवान्को व्यजन डुला रहा हूँ एवं सम्पूर्ण स्पर्शतत्त्वसे भगवान्के चरण दबा रहा हूँ। सम्पूर्ण आकाशतत्त्वमें भगवान्को बिहार करा रहा हूँ एवं सम्पूर्ण शब्दतत्त्वसे भगवान्की स्तुति कर रहा हूँ। इस प्रकार पूजा करते-करते अन्तमें जो कुछ अवशेष रह जाय मैं, मेरा वह सब दक्षिणास्वरूप भगवान्के चरणोंमें चढ़ा देना चाहिये। और

अनुभव करना चाहिये कि यह सम्पूर्ण विश्व, मैं, मेरा जो कुछ है वह सब भगवान्‌का है, सब भगवान्‌ही हैं। दूसरे प्रकारसे भी मानस पूजा कर सकते हैं।

जब ध्यान टूटे तब सम्भव हो तो बाह्य पूजा करके, नहीं तो ऐसे ही मन्त्रका जप करना चाहिये। सोलह लाख जप करनेसे इसका अनुष्ठान पूरा होता है। यह मन्त्र सिद्ध हो जानेपर कल्पवृक्षस्वरूप बतलाया गया है। इसका दशांश हवन करना चाहिये या दशांशका चौगुना जप। बृहत् अनुष्ठान करना हो तो किसी जानकारसे सलाह भी ले लेना चाहिये। इतनी बात अवश्य है कि चाहे जैसे भी जपें इसके जपसे हानि नहीं, लाभ-ही-लाभ है।

(३)

'ॐ रां रामाय नमः' यह षडक्षर राममन्त्र बहुत ही प्रसिद्ध है। शास्त्रोंमें इसे चिन्तामणि नामसे कहा गया है। इसके जपसे भगवान् राम प्रसन्न होते हैं, सकाम साधकोंकी सम्पूर्ण कामनाएँ पूर्ण कर देते हैं। निष्काम साधकोंको यथाधिकार भगवत्प्रेम या ज्ञान दे देते हैं। इस मन्त्रके ब्रह्मा ऋषि हैं, गायत्री छन्द है और श्रीराम देवता हैं। इनका यथास्थान न्यास कर लेना चाहिये। तत्पश्चात् करांगन्यास करना चाहिये। **ॐ रां अङ्गुष्ठाभ्याम् नमः, ॐ रीं तर्जनीभ्याम् स्वाहा, ॐ रूं मध्यमाभ्याम् वषट्, ॐ रैं अनामिकाभ्याम् हूम्, ॐ रौं कनिष्ठिकाभ्याम् वौषट्, ॐ रः करतलकरपृष्ठाभ्याम् फट्,** इसी प्रकार हृदय, सिर, शिखा, नेत्र, कवच और अस्त्रमें भी न्यास कर लेना चाहिये। फिर मन्त्रान्यास करना चाहिये। ब्रह्मरन्ध्रमें **ॐ रां नमः,** भौहोंके बीचमें **ॐ रां नमः,** हृदयमें **ॐ मां नमः** नाभिमें **ॐ यं नमः,** लिंगमें **ॐ नं नमः,** पैरोंमें **ॐ मं नमः,** इसके पश्चात् **ॐ नमो भगवते वासुदेवाय** मन्त्रकी विधिमें बतलाये हुए मूर्तिपञ्जर और किरीटन्यास करना चाहिये। इस मन्त्रका ध्यान निम्नलिखित है—

कालोम्भोधरकान्तिकान्तमनिशं वीरासनाध्यासिनं
मुद्रां ज्ञानमयीं दधानमपरं हस्ताम्बुजं जानुनि।
सीतां पार्श्वगतां सरोरुहकरां विद्युन्निभां राघवं पश्यन्तं
मुकुटाङ्गदादिविविधाकल्पोज्ज्वलाङ्ग भजे॥

'भगवान् श्रीरामके शरीरकी कान्ति वर्षाकालीन मेघके समान श्यामल है। एक-एक अङ्गसे कोमलता टपक रही है। वीरासनसे बैठे हुए हैं, एक हाथ जंघेपर रखा हुआ है और दूसरा हाथ ज्ञानमुद्रायुक्त है। हाथमें कमल लिये श्रीसीताजी

पास ही बैठी हुई हैं। उनके शरीरसे बिजलीके समान प्रकाश निकल रहा है। भगवान् श्रीराम उनकी ओर प्रेमपूर्ण दृष्टिसे देख रहे हैं। मुकुट, बाजूबन्द आदि दिव्य सुन्दर-सुन्दर आभूषण शरीरपर जगमगा रहे हैं। ऐसे भगवान् रामकी मैं सेवा कर रहा हूँ।' ध्यानके पश्चात् मानस सामग्रीसे भगवान्‌की पूजा करनी चाहिये। पूजाकी विधि अन्यत्र देखनी चाहिये। इस मन्त्रका अनुष्ठान छः लाख होता है, दशांश हवन होता है।

इस मन्त्रके कई भेद हैं। जैसे **ॐ रां रामाय नमः, ॐ क्लीं रामाय नमः, ॐ ह्रीं रामाय नमः, ॐ ऐं रामाय नमः, ॐ श्रीं रामाय नमः, ॐ रामाय नमः,** इनके ऋषि भी पृथक्-पृथक् हैं। क्रमशः ब्रह्मा, सम्मोहन, शक्ति, दक्षिणामूर्ति, अगस्त्य, श्रीशिव। दूसरे मन्त्रके ऋषिके सम्बन्धमें मतभेद हैं, कहीं-कहीं सम्मोहनके स्थानमें विश्वामित्रका नाम आता है। इन मन्त्रोंके न्यास, ध्यान, पूजा आदि पूर्वोक्त मन्त्रके समान ही हैं। सब-के-सब सिद्ध मन्त्र हैं। इनसे अभीष्टकी सिद्धि होती है।

(४)

भगवान् रामका दशाक्षर मन्त्र है **'ॐ हुं जानकीवल्लभाय स्वाहा'** इसके वशिष्ठ ऋषि हैं, विराट छन्द है, सीतानाथ भगवान् राम देवता हैं। इसका बीज **हुं** है और स्वाहा शक्ति है। करन्यास और अङ्गन्यास **क्लीं**से करना चाहिये। **ॐ क्लीं अङ्गुष्ठाभ्याम् नमः** इत्यादि। इसके दस अक्षरोंका न्यास शरीरके दस अङ्गोंमें होता है। जैसे मस्तकमें **'ॐ हुं नमः'**, ललाटमें **'ॐ जां नमः'** भौहोंके बीचमें **'ॐ नं नमः'** इसी प्रकार शेष अक्षरोंका भी तालु, कंठ, हृदय, नाभि, ऊरु, जानु और दोनों पैरोंमें न्यास कर लेना चाहिये। इसका ध्यान निम्नलिखित है—

अयोध्यानगरे रम्ये रत्नसौन्दर्यमण्डपे।
मन्दारपुष्पैराबद्धवितानतोरणान्विते ॥
सिंहासनसमारूढं पुष्पकोपरि राघवम्।
रक्षोभिर्हरिभिर्देवैर्दिव्ययानगतैः शुभैः ॥
संस्तूयमानं मुनिभिः सर्वज्ञैः परिशोभितम्।
सीतालङ्कृतवामाङ्गं लक्ष्मणेनोपसेवितम् ॥
श्यामं प्रसन्नवदनं सर्वाभरणभूषितम्।

'मनोहर अयोध्यानगरीमें एक अत्यन्त सुन्दर रत्नोंका बना मण्डप है। कल्पवृक्षके पुष्पोंसे उसकी चाँदनी और तोरण बने हुए हैं। सिंहासनके ऊपर बिछे हुए सुन्दर

फूलोंपर भगवान् राम बैठे हुए हैं। राक्षस, वानर और देवगण दिव्य विमानोंसे आ-आकर उनकी स्तुति कर रहे हैं। सर्वज्ञ मुनिगण चारों ओर रहकर उनकी सेवा कर रहे हैं। बायीं ओर माता सीता विराजमान हैं। लक्ष्मण निरन्तर सेवामें संलग्न हैं। भगवान् रामका शरीर श्यामवर्णका है। मुखमण्डल प्रसन्न है और वे सब प्रकारके दिव्य आभूषणोंसे आभूषित हैं।'

इस प्रकार ध्यान करके पूर्वोक्त पद्धतिसे मानस पूजा और बाह्य पूजा करनी चाहिये तथा मन्त्रका जप करना चाहिये। इसका अनुष्ठान दस लाखका होता है और उसके दशांश हवनादि होते हैं।

(५)

भगवान् रामका नाम ही परम मन्त्र है। **राम-राम** करते रहो किसी मन्त्रकी आवश्यकता नहीं। सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण हो जायँगे। राममन्त्रका जप दो प्रकारसे किया जाता है—एक तो नामबुद्धिसे और दूसरा मन्त्रबुद्धिसे। नामके 'जपमें किसी प्रकारकी विधि आवश्यक नहीं है। सोते-जागते, उठते-बैठते, चलते-फिरते रामनामका जप किया जा सकता है। परन्तु मन्त्रबुद्धिसे जो जप किया जाता है उसमें विधिकी आवश्यकता है। उसका केवल जप भी होता है और उसमें कई बीजाक्षर जोड़कर भी जप करते हैं; जैसे **श्रीं राम श्रीं, ह्रीं राम ह्रीं,** इनके साथ स्वाहा, **नमः, हुं, फट्** आदि भी जोड़ सकते हैं। जैसे **श्रीं राम श्रीं स्वाहा, ह्रीं राम ह्रीं नमः, क्लीं राम क्लीं हुं फट्,** इसी प्रकार **ऐं** भी जोड़ सकते हैं। इस प्रकार पृथक् योगसे त्र्यक्षर, चतुरक्षर, षडक्षर आदि राममन्त्र बनते हैं। ये सब-के-सब मन्त्र चतुर्विध पुरुषार्थको देनेवाले हैं। राम शब्दके साथ चन्द्र और भद्र शब्द जोड़नेपर भी रामभद्र और रामचन्द्र यह चतुरक्षर मन्त्र बनते हैं। **रामाय नमः, श्रीं रामाय नमः, क्लीं रामाय नमः, अ रामाय नमः, आ रामाय नमः,** इस प्रकार सम्पूर्ण वर्णोंको जोड़कर पचासों प्रकारके राममन्त्र बनते हैं। **रां** यह रामका एकाक्षर मन्त्र है। ये सब-के-सब मन्त्र भगवान्‌के प्रसादजनक हैं। इन सब मन्त्रोंके ब्रह्मा ऋषि हैं, गायत्री छन्द है और रामचन्द्र देवता हैं। एकाक्षर मन्त्रका अनुष्ठान बारह लाखका होता है और अन्य मन्त्रोंका छः लाखका। इनके ध्यान, पूजा आदि पूर्वोक्त षडक्षर मन्त्रके समान ही हैं। जिस साधकको भगवान्‌का जो लीला-विग्रह रुचे, उसीका ध्यान किया जा सकता है। भगवान् रामके रूपका वर्णन इस श्लोकमें बड़ा सुन्दर हुआ है—

दूर्वादलद्युतितनुं तरुणाब्जनेत्रं हेमाम्बरं वरविभूषणभूषिताङ्गम्।
कन्दर्पकोटिकमनीयकिशोरमूर्तिं पूर्तिं मनोरथभुवां भज जानकीशम्॥

‘भगवान् रामका शरीर दूर्वादलके समान साँवला है, खिले हुए कमलके समान बड़े-बड़े नेत्र हैं। करोड़ों कामके समान अत्यन्त सुन्दर किशोर मूर्ति है। पीताम्बर धारण किये हुए हैं और अनेकों उत्तम आभूषणोंसे उनके अंग-प्रत्यंग आभूषित हैं। वे सम्पूर्ण मनोरथोंको पूर्ण करनेवाले हैं और माँ जानकीके जीवनधन हैं। हम प्रेमपूर्वक उनका ध्यान कर रहे हैं।’

(६)

भगवान् श्रीकृष्णके सैकड़ों मन्त्र प्रसिद्ध हैं। यहाँ केवल कुछ गिने-चुने मन्त्रोंकी ही चर्चा की जायगी। श्रीकृष्णका दशाक्षर मन्त्र बड़े ही महत्त्वका माना जाता है। दशाक्षर-मन्त्र है **‘गोपीजनवल्लभाय स्वाहा’**। परन्तु इसके पूर्व क्लीं जोड़नेका विधान है तथा बिना प्रणवके कोई मन्त्र होता ही नहीं। इसलिये जपके समय **‘ॐ क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा,’** इस प्रकार जप करना चाहिये। प्रातःकृत्य, वैष्णवाचमन आदि करके इस मन्त्रका विशेष प्राणायाम करना चाहिये। इस मन्त्रका प्राणायाम दो प्रकारका होता है—एक तो क्लींके द्वारा और दूसरा दशाक्षर मन्त्रके द्वारा। दोनोंके नियम पृथक्-पृथक् हैं। एक बार क्लींका उच्चारण करके दाहिनी नासिकासे वायु निकाल दे फिर सात बार जप करते हुए वायुको बायी नाकसे खींचे, बीस बार जप करनेतक वायुको रोक रखे और फिर एक बार उच्चारण करके बायीं नाकसे वायु छोड़ दे। फिर दक्षिणसे पूरक, दोनोंसे कुम्भक एवं दक्षिणसे रेचक इस प्रकार तीन प्राणायाम करे। यदि मन्त्रसे ही प्राणायाम करना हो तो २८ बार पूरक, कुम्भक, रेचक करना चाहिये।

इस मन्त्रके ऋषि नारद हैं, छन्द गायत्री है और देवता भगवान् श्रीकृष्ण हैं। इसका बीज **क्लीं** है और स्वाहा शक्ति है। इनका क्रमशः सिर, मुख, हृदय, गुह्य और पदमें न्यास करना चाहिये। मन्त्रकी अधिष्ठात्री देवी दुर्गा हैं। जप प्रारम्भ करनेके पूर्व उनका स्मरण और नमन कर लेना चाहिये। इसमें न्यासकी विधि बहुत ही विस्तृत है। संक्षेपसे मूर्ति पञ्जरन्यास जो कि **ॐ नमो भगवते वासुदेवाय** मन्त्रकी विधिमें लिखा गया है, कर लेना चाहिये।

ॐ गों नमः, ॐ पीं नमः, ॐ जं नमः इस प्रकार मंत्रके प्रत्येक अक्षरके साथ ॐ और नमः जोड़कर हृदय, सिर, शिखा, सर्वाङ्ग दिशाएँ, दक्षिण पार्श्व, वाम पार्श्व, कटि, पीठ और मूर्धामें न्यास कर लेना चाहिये। इसका पंचांगन्यास निम्नलिखित है—

ॐ आचक्राय स्वाहा हृदयाय नमः।

ॐ विचक्राय स्वाहा शिरसे स्वाहा।
ॐ सुचक्राय स्वाहा शिखायै वषट्।
ॐ त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा कवचाय हुम्।
ॐ असुरान्तकचक्राय स्वाहा अस्त्राय फट्।

इसके पश्चात् द्वादशाक्षरमन्त्रोक्त किरीट, केयूरादि मन्त्रसे व्यापकन्यास करके **ॐ सुदर्शनाय अस्त्राय फट्,** इससे दिग्बन्ध करके सम्पूर्ण बाधा-विघ्ननिवारक अपने चारों ओर रक्षकरूपसे स्थित चक्रभगवान्‌का चिन्तन करना चाहिये। इसके बाद ध्यान करना चाहिये।

रमणीय श्रीवृन्दावनधाममें कमलनयन श्यामसुन्दर भगवान् श्रीकृष्ण प्रेममूर्ति गोपकन्याओंको बाँसुरी बजा-बजाकर अपनी ओर आकर्षित कर रहे हैं। गोपकन्याओंकी आँखें उनके सुन्दर साँवरे मुखकमलपर लगी हैं और भगवान् श्रीकृष्णसे मिलनेके लिये उनका हृदय उत्सुक हो रहा है। वे इतनी प्रेममुग्ध हो गयी हैं कि उन्हें अपने तन-बदनकी सुधि नहीं है, गला रुँध गया है, बोलतक नहीं सकतीं। उनके शरीरके आभूषण जगमगा रहे हैं, वे जब प्रेमगर्भित दृष्टिसे मुस्कराकर श्रीकृष्णकी ओर देखती हैं तो उनके लाल-लाल अधरोंपर दाँतोंकी उज्ज्वल किरणें नाच जाती हैं। भगवान् श्रीकृष्णका मुख चन्द्रमाके समान खिले हुए नीले कमलके समान शोभायमान हो रहा है। सिरपर मुकुटमें मयूरपिच्छ लगा हुआ है, वक्षःस्थलपर श्रीवत्सका चिह्न है और कौस्तुभमणि पहने हुए हैं। उनके सुन्दर शरीरपर पीताम्बर फहरा रहा है और शरीरकी ज्योतिसे उनके दिव्य आभूषणोंकी कान्ति भी मलिन पड़ रही है। वे बड़े ही मधुर स्वरसे बाँसुरी बजा रहे हैं। गौएँ एकटकसे उन्हें देख रही हैं। एक ओर ग्वाल-बाल घेरे हुए हैं तो दूसरी ओर गोपियाँ भी अपने नेत्रकमलोंसे उनकी पूजा कर रही हैं। ऐसे भगवान् श्रीकृष्णका हम निरन्तर चिन्तन करते रहें।

फुल्लेन्दीवरकान्तिमिन्दुवदनं बर्हावतंसप्रियं
श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम्।
गोपीनां नयनोत्पलार्चिततनुं गोगोपसंघावृतं
गोविन्दं कलवेणुवादनपरं दिव्याङ्गभूषं भजे॥

मानस पूजा और सम्भव हो तो बाह्य पूजा करनेके पश्चात् मन्त्रका जप करना चाहिये। इसका अनुष्ठान दस लाखका होता है। उसका दशांश हवन आदि। इतना स्मरण रखना चाहिये कि यहाँ जो बातें लिखी जा रही हैं वे बहुत ही साधारण संक्षिप्त और नित्यपूजाकी हैं। जिन्हें बृहत् अनुष्ठान करना हो वे किसी जानकारसे पूरी विधि जान लें तो बहुत ही अच्छा हो। यों तो भगवान्

श्रीकृष्णके मन्त्रजपसे लाभ-ही-लाभ है।

(७)

श्रीकृष्णदशाक्षरमन्त्रके साथ श्रीं, ह्रीं, क्लीं, जोड़ देनेपर त्रयोदशाक्षर मन्त्र बन जाता है। इन तीनोंको भिन्न-भिन्न क्रममें जोड़नेपर त्रयोदशाक्षर मन्त्र तीन प्रकारका हो जाता है; यथा—

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।
ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।

इन तीनोंकी विधि पूर्वोक्त दशाक्षर मन्त्रकी भाँति ही है। ऋषि नारद, छन्द विराट गायत्री और श्रीकृष्ण देवता। बीजशक्ति और मन्त्राधिष्ठात्री देवता पूर्ववत्। इनका अनुष्ठान पाँच लाखका ही होता है। ये मन्त्र सर्वार्थसाधक, भगवत्प्रसादजनक और महापुरुषोंके द्वारा अनुभूत हैं। श्रद्धा-विश्वासके साथ इनमें लग जानेसे महान् फलकी प्राप्ति होती है। इन मन्त्रोंका ध्यान भी दशाक्षर मन्त्रके समान ही करना चाहिये। किसी-किसीके मतसे दूसरे और तीसरे मन्त्रोंके ध्यान भिन्न प्रकारके हैं। भगवान् श्रीकृष्णकी लीलाका चिन्तन होना चाहिये। पूर्वोक्त ध्यानपर ही अधिकांश लोग जोर देते हैं।

(८)

गोपालतापनी उपनिषद्का अष्टादशाक्षर मन्त्र तो बहुत ही प्रसिद्ध मन्त्र है। वह है **'ॐ क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।'** प्रातः—कृत्यसे लेकर सम्पूर्ण क्रियाकलाप करके ऋष्यादिन्यास करना चाहिये। इसके भी ऋषि नारद हैं, गायत्री छन्द है और श्रीकृष्ण देवता हैं। क्लीं बीज और स्वाहा शक्ति है। पूरे मन्त्रका उच्चारण करके तीन बार व्यापकन्यास कर लेना चाहिये। इसका करन्यास निम्नलिखित है—

ॐ क्लीं कृष्णाय अङ्गुष्ठाभ्याम नमः।
ॐ गोविन्दाय तर्जनीभ्याम् स्वाहा।
ॐ गोपीजन मध्यमाभ्याम् वषट्।
ॐ वल्लभाय अनामिकाभ्याम् हुम्।
ॐ स्वाहा कनिष्ठाभ्याम् फट्।

इसी क्रमसे **ॐ क्लीं कृष्णाय हृदयाय नमः** आदि अंगन्यास करके

अष्टादशाक्षर मन्त्रसे सिरसे पैरतक व्यापकन्यास कर लेना चाहिये। फिर **ॐ क्लीं नमः, ॐ कृं नमः, ॐ ष्णां नमः,** इस प्रकार मन्त्रके प्रत्येक वर्णका सिर, ललाट, आज्ञाचक्र, दोनों कान, दोनों आँख, दोनों नाक, मुख, गला, हृदय, नाभि, कटि, लिंग, दोनों जानु और दोनों जंघोंमें न्यास कर लेना चाहिये। नेत्र, मुख, हृदय, गुह्य और चरणोंमें मन्त्रके प्रत्येक पदके साथ नमः जोड़कर न्यास कर लेना चाहिये। इस मन्त्रमें अंगन्यासका क्रम करन्यासके अनुरूप ही है। मूर्तिपञ्जरन्यास और किरीटन्यास पूर्व मन्त्रोंके अनुरूप ही इसमें भी होते हैं। ध्यान दशाक्षरमन्त्रवाला ही है। उसके पश्चात् मानस पूजा, बाह्य पूजा आदि करके जप करना चाहिये। इस मन्त्रका अनुष्ठान बहुत ही शीघ्र फलप्रद होता है। इस मन्त्रके साथ ह्रीं और श्रीं जोड़ देनेपर यही मन्त्र बीस अक्षरका हो जाता है। केवल ऋषि नारदके स्थानमें ब्रह्मा हो जाते हैं और न्यासमें इस प्रकार कहना पड़ता है।

(९)

बालगोपालके अठारह मन्त्र बहुत ही प्रसिद्ध हैं। किसी एकके द्वारा भगवान्की आराधना करनेसे साधकका अभीष्ट सिद्ध होता है। यहाँ उन मन्त्रोंका संक्षेपरूपसे स्वरूपनिर्देश किया जाता है—

'**ॐ कृः**' यह एकाक्षर मन्त्र है।

'**ॐ कृष्ण**' यह द्वयक्षर मन्त्र है।

'**ॐ क्लीं कृष्ण**' यह त्र्यक्षर मन्त्र है।

'**ॐ क्लीं कृष्णाय**' यह चतुरक्षर मन्त्र है।

'**ॐ कृष्णाय नमः**' '**ॐ क्लीं कृष्णाय क्लीं**' ये दो पञ्चाक्षर मन्त्र हैं।

'**ॐ गोपालाय स्वाहा**', '**ॐ क्लीं कृष्णाय स्वाहा**', '**ॐ क्लीं कृष्णाय नमः**' ये तीन षडक्षर मन्त्र हैं।

'**ॐ कृष्णाय गोविन्दाय,**' '**ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय क्लीं**' ये सप्ताक्षर मन्त्र हैं।

'**ॐ क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय**', '**ॐ दधिभक्षणाय स्वाहा**', '**ॐ सुप्रसन्नात्मने नमः**' ये अष्टाक्षर मन्त्र हैं।

'**ॐ क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय क्लीं,**' '**ॐ क्लीं ग्लौं श्यामलाङ्गाय नमः**' ये नवाक्षर मन्त्र हैं।

'**ॐ बालवपुषे कृष्णाय स्वाहा**' यह दशाक्षर मन्त्र है।

'**ॐ बालवपुषे क्लीं कृष्णाय स्वाहा**' यह एकादशाक्षर मन्त्र है।

प्रातःकालके सारे नित्यकृत्य समाप्त होनेके पश्चात् इनमेंसे किसी एकका जप करना चाहिये। इन सब मन्त्रोंके ऋषि नारद हैं, गायत्री छन्द है और श्रीकृष्ण देवता हैं। इनका क्रमसे सिर, मुख और हृदयमें न्यास कर लेना चाहिये। करन्यास और अङ्गन्यास निम्नलिखित मन्त्रोंसे करना चाहिये—

ॐ क्लां अंगुष्ठाभ्यां नमः।
ॐ क्लीं तर्जनीभ्यां स्वाहा।
ॐ क्लूं मध्यमाभ्यां वषट्।
ॐ क्लैं अनामिकाभ्यां हुम्।
ॐ क्लौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्।
ॐ क्लः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

इसी क्रमसे '**ॐ क्लां हृदयाय नमः**' इत्यादि अङ्गन्यास भी कर लेना चाहिये। इसके पश्चात् पूर्वमन्त्रोक्त भावना करके बालगोपालका ध्यान करना चाहिये। इन अठारहों मन्त्रोंका ध्यान एक ही है। यथा—

अव्याद् व्याकोषनीलाम्बुजरुचिररुणाम्भोजनेत्रोऽम्बुजस्थो
बालो जङ्घाकटीरस्थलकलितरणत्किङ्किणीको मुकुन्दः।
दोर्भ्यां हैयंगवीनं दधदतिविमलं पायसं विश्ववन्द्यो
गोगोपीगोपवीतो रुरुनखविलसत्कण्ठभूषश्चिरं वः॥

भगवान् गोपालके अङ्गकी कान्ति खिले हुए नील कमलके समान है। नेत्र रक्तकमलके समान हैं और वे बालकवेषमें कमलके ऊपर नृत्य कर रहे हैं। उनके चरणोंमें नूपुर झुनझुन कर रहे हैं और कमरमें किङ्किणीकी ध्वनि हो रही है। एक हाथमें नवनीत लिये हुए हैं और दूसरेमें अत्यन्त उज्ज्वल खीर। ये साधारण बालक नहीं, सारे संसारके वन्दनीय हैं। चारों ओरसे इन्हें गौ, ग्वाल और ग्वालिनें घेरे हुए हैं। कण्ठमें बाघके नखकी कँठुली शोभायमान है। ये सर्वदा सारे जगत्‌की रक्षामें तत्पर रहते हैं। इस प्रकार ध्यान करते हुए मन-ही-मन भगवान्‌की षोडशोपचारसे पूजा करनी चाहिये। विशेष अनुष्ठानके लिये विशेष विधियाँ हैं। इनमेंसे किसी मन्त्रका अनुष्ठान एक लाखका होता है और घी, मिश्री और खीरसे दस हजार आहुतियोंका हवन होता है। हवनका सामर्थ्य न होनेपर चालीस हजार जप और करना चाहिये। हवनकी संख्यासे ही तर्पणका भी विधान है। श्रद्धा-भक्तिपूर्वक जप करनेपर ये मन्त्र अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष, भगवद्दर्शन और भगवत्प्रेमको देनेवाले हैं। जो बिना श्रद्धा-भक्तिके विधिपूर्वक जप करते हैं उनके अंदर ये श्रद्धा-भक्तिका सञ्चार करनेवाले हैं।

बालगोपालका एक दूसरा अष्टाक्षर मन्त्र है—

'ॐ गोकुलनाथाय नमः।'

इसके ब्रह्मा ऋषि हैं, गायत्री छन्द है और श्रीकृष्ण देवता हैं। उनका यथास्थान न्यास करके मन्त्रका न्यास करना चाहिये—

ॐ गो कु अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।
ॐ ल ना तर्जनीभ्यां स्वाहा।
ॐ था य मध्यमाभ्यां वषट्।
ॐ नमः अनामिकाभ्यां हुम्।
ॐ गोकुलनाथाय नमः कनिष्ठाभ्यां फट्।

इसी प्रकार **'ॐ गो कु हृदयाय नमः'** इत्यादि अंगन्यास भी कर लेना चाहिये। वैष्णवमन्त्रोंमें कई स्थानोंपर षडंगन्यासकी जगह पञ्चांगन्यास ही आता है। इसके ध्यानका प्रकार निम्नलिखित है—

पञ्चवर्षमतिदृप्तमङ्गने धावमानमतिचञ्चलेक्षणम्।
किङ्किणीवलयहारनूपुरैरञ्चितं नमत गोपबालकम्॥

'भगवान् बालगोपालकी अवस्था पाँच वर्षकी है। स्वभाव बड़ा ही चञ्चल है। आँगनमें इधर-उधर दौड़ रहे हैं। आँखें बड़ी चञ्चलताके साथ अपने भक्तोंपर कृपामृतकी वृष्टि करनेके लिये दौड़ रही हैं। किंकिणी, कंकण, हार, नूपुर आदि आभूषणोंसे भूषित हैं। ऐसे बालगोपालके सामने हम बड़े प्रेमसे प्रणत होते हैं।'

ऐसे ही भगवान्‌को नमस्कार करना चाहिये। इसी प्रकार ध्यान करके मानसपूजा करनी चाहिये। बालगोपालकी ऐसी ही मूर्तिकी प्रतिष्ठा करके बाह्य-पूजा करनी चाहिये। इसका अनुष्ठान आठ लाखका होता है और आठ हजारका हवन होता है। जो साधक इस मन्त्रका जप करता है उसकी सांसारिक अभिलाषाएँ भी पूरी होती हैं और भगवान् तो मिलते ही हैं; परन्तु जहाँतक हो सके सांसारिक अभिलाषाओंकी पूर्तिके लिये इन मन्त्रोंका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

बालगोपालका एक दूसरा मन्त्र है—**'ॐ क्लीं कृष्ण क्लीं'।** इसके ऋषि आदि पूर्वोक्त मन्त्रके ही हैं और न्यास भी वैसे ही होता है। इसके ध्यानका वर्णन दूसरे प्रकारसे हुआ है—

श्रीमत्कल्पद्रुमूलोद्गतकमललसत्कर्णिकासंस्थितो
यस्तच्छाखालम्बिपद्मोदरविशरदसंख्यातरत्नाभिषिक्तः।
हेमाभः स्वप्रभाभिस्त्रिभुवनमखिलं भासयन् वासुदेवः
पायाद् वः पायसादोऽनवरतनवनीतामृताशीरसीमः॥

'कल्पवृक्षके मूलसे निकले हुए कमलकी सुन्दर कर्णिकापर श्रीगोपाल

विराजमान हैं। इस कल्पवृक्षकी शाखाओंसे निकले हुए कमलोंसे असंख्यों रत्न झर रहे हैं और उनसे बालगोपालका अभिषेक हो रहा है। गोपालके शरीरकी कान्ति सुवर्णके समान है और उनकी अंगकान्तिसे तीनों लोक प्रकाशित हो रहे हैं। ये गोपालरूपी वासुदेव निरन्तर पायस और मक्खनका रस लेते रहते हैं और इनका श्रीविग्रह अनन्त है। ये सर्वदा हमलोगोंकी रक्षा करें।' इस प्रकार ध्यान करके मन्त्रका जप करना चाहिये। इस मन्त्रका अनुष्ठान चार लाखका होता है। चवालीस हजार हवन होता है। इस मन्त्रके दोनों 'क्लीं' में यदि रेफ जोड़ दिया जाय तो यह मन्त्रचूड़ामणि बन जाता है। उस मन्त्रका स्वरूप होगा—'**ॐ क्लीं कृष्ण क्लीं्र**' इसके ऋषि, देवता आदि भी पूर्वोक्त मन्त्रके समान हैं। इसका न्यास 'क्लीं्र' बीजसे होता है—**यथा ॐ क्लीं्र अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ क्लीं्र हृदयाय नमः** इत्यादि। इसके ध्यानका प्रकार निम्नलिखित है—

आरक्तोद्यानकल्पद्रुमतलविलसत्स्वर्णदोलाधिरूढं
गोपीभ्यां प्रेक्ष्यमाणं विकसितनवबन्धूकसिन्दूरभासम्।
बालं लोलालकान्तं कटितटविलसत्क्षुद्रघण्टाघटाढ्यं
वन्दे शार्दूलकामाङ्कुशललितगणाकल्पदीप्तं मुकुन्दम्॥

'अनुरागके रागसे रञ्जित लाल उद्यानमें कल्पद्रुमके नीचे सोनेके झूलनेपर भगवान् बालगोपाल झूल रहे हैं। दो गोपियाँ दोनों ओर खड़ी होकर धीरे-धीरे उन्हें झुला रही हैं और प्रेमभरी चितवनसे देख रही हैं। उनके शरीरकी कान्ति खिले हुए बन्धूकपुष्पके समान सिन्दूरवर्णकी है। उनकी घुँघराली अलकें शीतल मन्द सुगन्ध वायुके झकोरोंसे कपोलोंपर लहरा रही हैं। कमरमें बँधे हुए घुँघरू पालनेके हिलनेसे झुनझुन कर रहे हैं। बघनहे आदिसे उनका गला बड़ा ही सुन्दर मालूम हो रहा है। ऐसे भगवान् बालगोपालकी हम बार-बार वन्दना करते हैं।'

ध्यानके पश्चात् मानसपूजा करके उपर्युक्त मन्त्रका जप करना चाहिये। इसके सब विधि-विधान पहले मन्त्रके समान हैं। अनुष्ठान भी उतनेका ही होता है।

(११)

भगवान् विष्णु, राम और कृष्णकी ही भाँति भगवान् शिवके भी अनेकों मन्त्र हैं। वास्तवमें विष्णु और शिवमें कोई भेद नहीं है। शिवके हृदय विष्णु हैं और विष्णुके हृदय शिव हैं। यदि शिव दिन-रात भगवान् विष्णुके नामका जप किया करते हैं तो भगवान् विष्णु भी शिवकी पूजा करते समय नियमित

कमलोंकी संख्या पूर्ण न होनेपर अपना नेत्रतक चढ़ा देते हैं। एक होनेपर भी भिन्न-भिन्न साधकोंकी रुचि भगवान्‌के भिन्न-भिन्न रूपोंकी ओर होती है। जिनकी रुचि विष्णुमें हो वे विष्णुका मन्त्र जपें, जिनकी रुचि शिवमें हो वे शिवके मन्त्र जपें। दोनोंके फल समान हैं, दोनोंसे ही कामनाएँ पूर्ण होती हैं, अन्तःकरण शुद्ध होता है, परमज्ञान अथवा परमप्रेमका उदय होता है। यहाँ एक-दो प्रधान मन्त्रोंकी ही चर्चा की जायगी। जो इन मन्त्रोंसे दीक्षित हों वे अथवा जिन्हें ये मन्त्र प्रिय हों वे दीक्षा लेकर अनुष्ठान कर सकते हैं।

'ॐ हौं' यह शिवजीका एकाक्षर मन्त्र है। इसे शास्त्रोंमें प्रासादबीज कहा गया है। प्रातःकृत्यसे प्राणायामतकके कृत्य करके मातृकान्यासकी भाँति श्रीकण्ठाक्षिन्यास करना चाहिये।

ॐ अं श्रीकण्ठपूर्णोदरीभ्यां नमः।
ॐ आं अनन्तविरजाभ्यां नमः।
ॐ इं सूक्ष्मशाल्मलीभ्यां नमः।
ॐ ईं त्रिमूर्तिलोलाक्षीभ्यां नमः।
ॐ उं अमरेश्वरवर्तुलाक्षीभ्यां नमः।
ॐ ऊं अर्घीशदीर्घघोणाभ्यां नमः।
ॐ ऋं भारभूतिसुदीर्घमुखीभ्यां नमः।
ॐ ॠं अतिथीशगोमुखीभ्यां नमः।
ॐ लृं स्थाणुकदीर्घजिह्वाभ्यां नमः।
ॐ ॡं हरकुण्डोदरीभ्यां नमः।
ॐ एं झिंटीशोद्ध्र्वमुखीभ्यां नमः।
ॐ ऐं भूतिकेशविकृतमुखीभ्यां नमः।
ॐ ओं सद्योजातज्वालामुखीभ्यां नमः।
ॐ औं अनुग्रहेश्वरोल्कामुखीभ्यां नमः।
ॐ अं अक्रूरसुश्रीमुखीभ्यां नमः।
ॐ अः महासेनविद्यामुखीभ्यां नमः।

अकारसे लेकर षोडश स्वरोंका न्यास कण्ठमें स्थित षोडशदल कमलपर करना चाहिये।

ॐ कं क्रोधीशसर्वसिद्धिमहाकालीभ्यां नमः।
ॐ खं चण्डेशसर्वसिद्धिसरस्वतीभ्यां नमः।
ॐ गं पञ्चान्तकगौरीभ्यां नमः।
ॐ घं शिवोत्तमत्रैलोक्यविद्याभ्यां नमः।

ॐ ङं एकरुद्रमन्त्रशक्तिभ्यां नमः।
ॐ चं कूर्मात्मशक्तिभ्यां नमः।
ॐ छं एकनेत्रभूतमातृकाभ्यां नमः।
ॐ जं चतुराननलम्बोदरीभ्यां नमः।
ॐ झं अब्जेशद्राविणीभ्यां नमः।
ॐ ञं सर्वनागरीभ्यां नमः।
ॐ टं सोमेशखेचरीभ्यां नमः।
ॐ ठं लाङ्गलिमञ्जरीभ्यां नमः।

क से लेकर ठ तकके बारह वर्णोंका न्यास हृदयके द्वाद्वशदल कमलपर करना चाहिये।

ॐ डं दारुकरूपिणीभ्यां नमः।
ॐ ढं अर्धनारीश्वरवीरणीभ्यां नमः।
ॐ णं उमाकान्तकाकोदरीभ्यां नमः।
ॐ तं आषाढिपूतनाभ्यां नमः।
ॐ थं दण्डिभद्रकालीभ्यां नमः।
ॐ दं अद्रियोगिनीभ्यां नमः।
ॐ धं मीनशङ्खिनीभ्यां नमः।
ॐ नं मेषगर्जिनीभ्यां नमः।
ॐ पं लोहितकालरात्रिभ्यां नमः।
ॐ फं शिखिकुब्जिकाभ्यां नमः।

ड से लेकर फ तकके दस वर्णोंका न्यास नाभिके दशदल कमलपर करना चाहिये।

ॐ बं छगलण्डकपर्दिनीभ्यां नमः।
ॐ भं द्विरण्डेशवज्राभ्यां नमः।
ॐ मं महाकालजयाभ्यां नमः।
ॐ यं त्वगात्मबालि सुमुखेश्वरीभ्यां नमः।
ॐ रं असृगात्मभुजङ्गेशरेवतीभ्यां नमः।
ॐ लं मांसात्मपिनाकीशमाधवीभ्यां नमः।
ॐ वं मेदात्मखड्गीशवारुणीभ्यां नमः।

ब से लेकर ल तकके छः वर्णोंका न्यास लिंगमूलमें स्थित षट्दल कमलपर करना चाहिये।

ॐ शं अस्थ्यात्मवकेशवायवीभ्यां नमः।

ॐ षं मज्जात्मश्वेतरक्षोविदारिणीभ्यां नमः।

ॐ सं शुक्रात्मभृग्वीशसहजाभ्यां नमः।

व से लेकर स तकके वर्णोंका न्यास मूलाधारके चतुर्दल कमलपर करना चाहिये।

ॐ हं प्राणात्मनकुलीशलक्ष्मीभ्यां नमः।

ॐ लं बीजात्मशिवव्यापिनीभ्यां नमः।

ॐ क्षं क्रोधात्मसंवर्तकमायाभ्यां नमः।

ह से लेकर क्ष तकके वर्णोंका न्यास आज्ञाचक्रमें करना चाहिये। (कोई-कोई इस चक्रको तीन दलका मानते हैं।)

न्यास, पूजा आदिसे पवित्र होकर मन्त्रके ऋषि आदिका यथास्थान न्यास करना चाहिये। इस मन्त्रके ऋषि वामदेव हैं, पंक्ति छन्द है और सदाशिव देवता हैं। इसके करांगन्यास 'ॐ हां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः दीर्घ मात्राओंसे युक्त हकारपर बिन्दु लगाकर होते हैं। इस मन्त्रका ध्यान निम्नलिखित है—

मुक्तापीतपयोदमौक्तिकजवावर्णैर्मुखैः
पञ्चभिस्त्र्यक्षैरञ्चितमीशमिन्दुमुकुटं पूर्णेन्दुकोटिप्रभम्।
शूलं टङ्ककृपाणवज्रदहनान्नागेन्द्रघण्टाङ्कुशान्
पाशंभीतिहरं दधानममिताकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे॥

श्रीमहादेवजीके पाँचों मुख पाँच वर्णके हैं। एक मुक्तावर्ण है, दूसरा पीतवर्ण है, तीसरा मेघवर्ण है, चौथा शुक्लवर्ण है और पाँचवाँ जवाकुसुमके समान (रक्तवर्ण) है। पाँचों मुखोंमें तीन-तीन नेत्र हैं और सबके ललाटमें अर्ध चन्द्रमा शोभायमान हैं। शरीरसे करोड़ों पूर्ण चन्द्रमाओंके समान कान्ति निकलती रहती है। नौ हाथोंमें शूल, टङ्क (पत्थर तोड़नेकी टाँकी), खड्ग, वज्र, अग्नि, सर्प, घंटा, अंकुश और पाश धारण किये हुए हैं तथा दसवें हाथमें अभयमुद्रा शोभायमान है। इनके शरीरपर नाना प्रकारकी विचित्र वस्तुएँ हैं और बड़ा ही दिव्य कर्पूरके समान उज्ज्वल अंग है। मैं प्रेमसे ऐसे भगवान् शंकरका ध्यान करता हूँ। इस प्रकार ध्यान करनेके पश्चात् मानसपूजा करनी चाहिये और अर्घ्यस्थापन करना चाहिये। शिवके अर्घ्यस्थापनमें यह विशेषता है कि शंखका प्रयोग नहीं करना चाहिये। इस मन्त्रका अनुष्ठान पाँच लाखका होता है, दशांश हवन होता है। इससे भगवान् शंकरकी प्रसन्नता सम्पन्न होती है।

(१२)

भगवान् शिवका दूसरा प्रसिद्ध मन्त्र है **'ॐ नमः शिवाय।'** यह ॐकारके बिना पञ्चाक्षर है और ओंकार जोड़नेपर षडक्षर कहा जाता है। इसके वामदेव ऋषि हैं, पंक्ति छन्द है और ईशान देवता हैं। इनका यथास्थान न्यास कर लेना चाहिये। इसका मूर्तिन्यास निम्न प्रकारका है—

दोनों तर्जनीमें—ॐ नं तत्पुरुषाय नमः।
दोनों मध्यमामें—ॐ मं अघोराय नमः।
दोनों कनिष्ठिकामें—ॐ शिं सद्योजाताय नमः।
दोनों अनामिकामें—ॐ वां वामदेवाय नमः।
दोनों अँगूठोंमें—ॐ यं ईशानाय नमः।

इसके बाद मन्त्रके प्रत्येक वर्णसे करन्यास और अंगन्यास कर लेना चाहिये। श्रीशिवमन्त्रका व्यापक न्यास निम्नलिखित है—

ॐ नमोऽस्तु भूताय ज्योतिर्लिङ्गामृतात्मने।
चतुर्मूर्तिवपुश्छायाभासिताङ्गाय शम्भवे॥

ध्यान इस प्रकार कहा गया है—

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।
पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं
विश्वाद्यंविश्वबीजं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्॥

भगवान् शिवके शरीरकी कान्ति चाँदीके पर्वतके समान उज्ज्वल है। ललाटपर अर्ध चन्द्रमा शोभायमान है एवं रत्नराशिके समान निर्मल अंग है। दो हाथोंमें परशु और मृगचर्म धारण किये हुए हैं। एक हाथमें वरकी मुद्रा है और दूसरे हाथमें अभयकी। मुखसे प्रसन्नता टपक रही है। बाघंबर पहने हुए कमलपर बैठे हुए हैं, पाँच मुख हैं। प्रत्येक मुखमें तीन आँखें हैं। सबका भय दूर करनेके लिये उद्यत हैं और यही विश्वके बीज एवं मूल कारण हैं। देवतालोग चारों ओरसे स्तुति कर रहे हैं। ऐसे भगवान् शंकरका ध्यान करना चाहिये। मानसपूजाके पश्चात् मन्त्रका जप करना चाहिये। इस मंत्रका अनुष्ठान छत्तीस लाखका होता है। साधक इसके द्वारा शीघ्रातिशीघ्र भगवान् शंकरका कृपा-प्रसाद प्राप्त करता है।

(१३)

श्रीहनुमानजीके बहुत-से मन्त्र हैं, यहाँ केवल दो मन्त्रोंकी चर्चा की जाती है। भगवान् श्रीकृष्णकी प्रेरणासे अर्जुनने इस मन्त्रका अनुष्ठान किया था। श्रीहनुमान्‌जीने प्रसन्न होकर अर्जुनको दर्शन दिया था, और युद्धके समय उनके रथपर स्थित होकर रथको भस्म होनेसे बचाया था। उन्हींके कारण कर्णके बाणोंसे अर्जुनका रथ बहुत पीछे नहीं हटता था। वह मन्त्र है—'ॐ हं हनुमते रुद्रात्मकाय हुं फट्।' यह द्वादशाक्षर मन्त्र है। नदीके तटपर, भगवान्‌के मन्दिरमें, निर्जन स्थानमें, पर्वत या वनमें इस मन्त्रकी साधना करनी चाहिये। इस मन्त्रका ध्यान निम्नलिखित है।

महाशैलं समुत्पाट्य धावन्तं रावणं प्रति।
तिष्ठ तिष्ठ रणे दुष्ट घोररावं समुत्सृजन्॥
लाक्षारसारुणं रौद्रं कालान्तकयमोपमम्।
ज्वलदग्निलसन्नेत्रं सूर्यकोटिसमप्रभम्॥
अङ्गदाद्यैर्महावीरैर्वेष्टितं रुद्ररूपिणम्।
एवं रूपं हनूमन्तं ध्यात्वा यः प्रजपेन्मनुम्॥
लक्षजपात् प्रसन्नः स्यात् सत्वं ते कथितं मया।

श्रीहनुमान्‌जी बड़ा भारी पर्वत उखाड़कर रावणकी ओर दौड़ रहे हैं और भीषण हुंकार करके रावणको डाँट रहे हैं कि रे दुष्ट! युद्धमें थोड़ी देर ठहर जा। लाक्षारसके समान अरुण वर्ण और प्रलयकालीन यमराजके समान भीषण श्रीहनुमानजीकी आँखें धधकती हुई आगके समान जाज्वल्यमान हो रही हैं। करोड़ों सूर्यकी भाँति चमकता हुआ शरीर है, रुद्ररूपी हनुमान्‌को अङ्गदादि महावीरोंने घेर रक्खा है। इस प्रकार हनुमान्‌का ध्यान करके मन्त्रका जप करना चाहिये। एक लाख जप पूरा होनेपर हनुमान्‌जी साधकपर प्रसन्न होते हैं। श्रीशिवजी कहते हैं कि हे पार्वती! यह बात सर्वथा सत्य है। इस मन्त्रमें ध्यानकी प्रधानता है, एकमात्र ध्यानसे ही सिद्धि प्राप्त हो जाती है।

प्रातःकाल नदीमें स्नान करके कुशासन बिछाकर तटपर बैठ जाय और प्राणायाम एवं कराङ्गन्यास करे। तत्पश्चात् मूलमन्त्रसे आठ पुष्पाञ्जलि देकर सीतासहित भगवान् रामचन्द्रका ध्यान करते हुए पूजा करनी चाहिये। ताम्रपत्रपर श्रीहनुमान्‌जीका यन्त्र अंकित करे। पहले केशरके साथ अष्टदल पद्म बनाना चाहिये। रक्त चन्दनकी कलमसे एवं घिसे हुए रक्तचन्दनसे उसका निर्माण करना चाहिये। पद्मकी कर्णिकामें

श्रीहनुमान्‌जीका मूलमन्त्र लिखकर श्रीहनुमान्‌जीका आवाहन करे और अर्घ्य, पाद्य आदि देकर मूलमन्त्रसे गंध, पुष्प आदि समर्पण करे। कमलके आठ दलोंपर पूर्वसे लेकर ईशानकोणतक क्रमशः सुग्रीव, लक्ष्मण, अंगद, नल, नील, जाम्बवान्, कुमुद और केशरीकी पूजा करे। कमलके दाहिने और बायें वायु और अञ्जनीकी पूजा करे। दलोंके अग्रभागमें वानरोंके लिये आठ पुष्पाञ्जलि दे। ध्यान करके एक लाख जप करे, जितने दिनोंतक एक लाखकी संख्या पूरी न हो उतने दिनोंतक ऐसा ही करना चाहिये। आखिरी दिन महान् पूजा करनी चाहिये। उस दिन एकाग्रचित्तसे तबतक जप करना चाहिये जबतक श्रीहनुमान्‌जीके दर्शन न हों। साधककी दृढ़ता देखकर श्रीहनुमान्‌जी प्रसन्न होते हैं और आधीरातको साधकके सामने आकर दर्शन देते हैं। साधककी इच्छाके अनुसार वर देते हैं और उसे कृतकृत्य कर देते हैं। यह साधन बड़ा ही पवित्र और देवताओंके लिये भी दुर्लभ है।

(१४)

श्रीहनुमान्‌जीका एक दूसरा मन्त्र है, **'ॐ हं पवननन्दनाय स्वाहा'** यह दशाक्षर मन्त्र है। इसको कल्पवृक्षस्वरूप कहते हैं, इस मन्त्रके जपसे सारी अभिलाषाएँ पूरी होती हैं। इसकी विधि निम्नलिखित है। इसका नाम वीरसाधन है और यह अत्यन्त गोपनीय है।

ब्राह्ममुहूर्तमें उठकर नित्यकृत्य करके नदीतटपर जाना चाहिये। वहाँ तीर्थका आवाहन करके स्नान करते समय आठ बार मूलमन्त्रका जप करना चाहिये। तत्पश्चात् बारह बार मन्त्र पढ़कर अपने ऊपर जल छिड़कना चाहिये। फिर वस्त्र पहनकर नदीके किनारे या पर्वतपर बैठकर, **ॐ ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादिसे करन्यास और ॐ ह्रां हृदयाय नमः** इत्यादिसे अंगन्यास करे। इसकी प्राणायामविधि भी अलग है। अकारसे लेकर अः तक सब स्वरोंका उच्चारण करके बायीं नासिकासे पूरक करना चाहिये। 'क' से लेकर 'म' तकके पाँच वर्गके अक्षरोंका उच्चारण करके कुम्भक करना चाहिये और 'य' से लेकर अवशेष वर्णोंका उच्चारण करके दाहिनी नासिकासे रेचक करना चाहिये। इस प्रकार तीन प्राणायाम करके मूलमन्त्रके अक्षरोंसे अंगन्यास करे। इसका ध्यान निम्नलिखित है—

ध्यायेद् रणे हनूमन्तं कपिकोटिसमन्वितम्।
धावन्तं रावणं जेतुं दृष्ट्वा सत्वरमुत्थितम्॥
लक्ष्मणं च महावीरं पतितं रणभूतले।
गुरुं च क्रोधमुत्पाद्य गृहीत्वा गुरुपर्वतम्॥

हाहाकारैः सदर्पैश्च कम्पयन्तं जगत्त्रयम्।
आब्रह्माण्डं समाव्याप्य कृत्वा भीमं कलेवरम्॥
इति ध्यात्वा षट् सहस्त्रं जपेत्।

वीरवर लक्ष्मण रणक्षेत्रमें गिरे हुए हैं; यह दृश्य देखकर, श्रीहनुमान्‌जी करोड़-करोड़ वानरोंके साथ रणभूमिमें आकर रावणको पराजित करनेके लिये बड़े वेगसे आगे बढ़ रहे हैं। अतिशय क्रोधके कारण अपनी हुंकारध्वनिसे त्रिभुवनको कम्पित करते हुए हाथमें विशाल शैल लेकर आक्रमण करने जा रहे हैं। इस समय वे ब्रह्माण्डव्यापी भयंकर शरीर प्रकट करके स्थित हैं। ध्यानके पश्चात् मन्त्रका छः हजार जप करना चाहिये। इस मन्त्रका छः दिनतक जप करनेके पश्चात् सातवें दिन दिनरात जप करना पड़ता है। जप करनेसे रातके चौथे पहरमें बड़ा भय दिखाकर श्रीहनुमान्‌जी साधकके सामने प्रकट होते हैं। जो साधक धीर भावसे स्थित रह जाता है उसे वे उसकी इच्छाके अनुसार लौकिक सम्पत्ति अथवा पारलौकिक सम्पत्ति या दोनों देते हैं। ज्ञान देते हैं अथवा भगवत्प्राप्तिका मार्ग बताते हैं।

(कल्याण वर्ष १२, सं० ९, १०, ११ एवं १२, पृष्ठ १३५२, १४२५, १५०४, एवं १५७०)

****

(१०)
भगवान् श्रीरामके दर्शन प्राप्त करनेके उपाय

संतोंकी उच्छिष्ट मात्र है मेरी बानी।
जानूँ उसका भेद भला क्या मैं अज्ञानी॥
आकर चारि लाख चौरासी। जाति जीव जल थल नभ बासी॥
सीय राममय सब जग जानी। करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी॥
जानि कृपाकर किंकर मोहू। सब मिलि करहु छाड़ि छल छोहू॥

गुरुजनोंके चरणोंका स्मरण करके तथा भगवान् शङ्कर और हनुमान्जी आदि श्रीरामचन्द्रजीके भक्तोंका ध्यान करके आप सर्वसाधारणके कल्याणके लिये श्रीरामचन्द्रजीके दर्शनोंका श्रुति-सम्मत उपाय लिख रहा हूँ। यद्यपि पद्धतिकारोंने इस विधिको सर्वथा गुप्त रखनेका आदेश दिया है और अनधिकारियोंके सम्मुख प्रकट करनेका बार-बार निषेध किया है, फिर भी यह विचारकर कि 'कल्याण' का कोई भी पाठक अनधिकारी नहीं हो सकता, इस अत्यन्त गुह्य विधिको विस्तारपूर्वक लिख रहा हूँ। मैं भक्त नहीं, भक्तोंकी चरणरज स्पर्श करनेका अधिकारी भी नहीं; केवल अपनी लेखनीको पवित्र करनेके उद्देश्यसे शास्त्रोंकी बात लिख रहा हूँ। मेरी तो यही रट है—

तुलसी जाके बदन ते, धोखेहु निकसत 'राम'।
ताके पगकी पगतरी, मेरे तनको चाम॥

भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन करनेके लिये जब हृदयमें अत्यन्त उत्कण्ठा हो, तब किसी शुभ दिन और शुभ लग्नपर गणपति, भगवान् शङ्कर तथा हनुमान्जीका ध्यान करके और यथालब्ध उपचारोंसे उनका पूजन करके उनसे प्रार्थना करनी चाहिये—'आप तीनों भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके भक्तशिरोमणि हैं तथा श्रीरामचन्द्रजीके भक्तोंके मार्गकी समस्त विघ्न-बाधाओंको दूर करनेवाले हैं। आपके चरणोंका ध्यान करके मैं श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन प्राप्त करनेका उपाय करना चाहता हूँ। आप मेरी सहायता करें, जिससे मुझे भगवान्के दर्शन शीघ्र ही प्राप्त हों।'

इस प्रकार प्रार्थना करके नदीके तीर, गोशाला अथवा पवित्र गृहमें ब्रह्मकूर्चका विधान करे। गोमूत्र, गोबर, दूध, दही, घी और कुशाका जल—ये पवित्र और पापनाशक कहे जाते हैं। ब्रह्मकूर्चका विधान करनेवालेको उचित है कि काली गौका मूत्र, सफेद गौका गोबर, ताँबेके रंगकी गौका दूध, लाल गौका दही और कपिला गौका घी ले। यदि इतने रंगोंकी गायें न मिल सकें तो केवल कपिला

गौका ही गोमूत्र आदि पाँचों वस्तुएँ ग्रहण कर ले। १ पल (१ तोले) गोमूत्र, आधे अँगूठेभर गोबर, ७ पल दूध, ३ पल दही, १ पल घी और १ पल कुशाका जल ग्रहण करे। गायत्री-मन्त्रसे गोमूत्र, 'गन्धद्वारां०' मन्त्रसे गोबर, 'आप्यायस्व०' मन्त्रसे दूध, 'दधिक्राव्णो०' मन्त्रसे दही, 'तेजोऽसि शुक्र०' मन्त्रसे घी और 'देवस्य त्वा०' मन्त्रसे कुशाका जल ग्रहण करे। इस प्रकार ऋचाओंसे पवित्र किये हुए पञ्चगव्यको अग्निके पास रखे। 'आपो हि ष्ठा०' मन्त्रसे गोमूत्रादिको चलावे, 'मा नस्तो के०' मन्त्रसे अभिमन्त्रित करे, 'इरावती०', 'इदं विष्णु०', 'मा नस्तोके०' और 'शंबती०'—इन ऋचाओंद्वारा अग्रभागसे युक्त सात हरी कुशाओंसे पञ्चगव्यका होम करे। होमसे बचे हुए पञ्चगव्यको ओङ्कार पढ़कर मिलाये। ओङ्कारका उच्चारण करके मथे। ओंङ्कार पढ़कर उठावे और ओङ्कारका उच्चारण करके पीये। स्त्री और शूद्र यह सारी प्रक्रिया, किसी विद्वान् ब्राह्मणसे करायें। यदि स्वयं करना चाहें तो वेदमन्त्रोंके स्थानपर 'नमःशिवाय' इस पञ्चाक्षर महामन्त्रसे सारी प्रक्रिया करें और ओङ्कारके स्थानपर भी 'नमःशिवाय' का ही प्रयोग करें। जैसे अग्नि काष्ठको जला देती है, उसी प्रकार यह ब्रह्मकूर्च त्वचा और हड्डियोंमें टिके हुए पापोंको जला देता है। देवताओंसे अधिष्ठित होनेके कारण ब्रह्मकूर्च तीनों लोकोंमें पवित्र है। ब्रह्मकूर्चसे एक दिन पूर्व, ब्रह्मकूर्चके दिन और उसके एक दिन पश्चात्—इन तीनों दिनोंमें उपवास करनेसे कलियुगके महान् पापी मनुष्य भी पवित्र हो जाते हैं।

इस प्रकार ब्रह्मकूर्च करके वैदिक अथवा तान्त्रिक या पौराणिक मन्त्रोंद्वारा पार्थिव-पूजन करे। पार्थिव-पूजनका विधान 'कल्याण' के शिवाङ्कमें प्रो० रामदासजी गौड़के लेखमें दिया हुआ है, संक्षेपमें उसे यहाँ दुहराया जाता है। 'हराय नमः' इस मन्त्रसे मृत्तिका ग्रहण करे, 'महेश्वराय नमः', इस मन्त्रसे पार्थिवेश्वरका निर्माण करे। 'पशुपतये नमः' इस मन्त्रसे प्राणप्रतिष्ठा करे। 'शिवाय नमः' इस मन्त्रसे पञ्चोपचार पूजन करे और 'महादेवाय नमः' इस मन्त्रसे विसर्जन करे। इस प्रकार पार्थिव-पूजन करे। पूजन करते समय राम और शिव दोनोंको एक ही अथवा एक दूसरेका परम भक्त समझे। इस प्रकारकी भावनासे पार्थिवेश्वरकी पूजा करके लगातार नौ दिनतक विधिपूर्वक वाल्मीकिरामायणका अथवा तुलसी-रामायणका पूजन और पाठ करे। यदि स्वयं पारायण करनेमें अशक्त हो तो किसी राम-भक्त अथवा शिव-भक्त विद्वान् ब्राह्मणसे विधिपूर्वक रामायणकी कथा श्रवण करे। कथाकी समाप्तिपर नित्य 'भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी' इत्यादिद्वारा आरती करे।

नित्य रात्रिमें महानिशा (डेढ़ पहर रात्रि बीतनेसे लेकर डेढ़ पहर रात्रि

रहनेके पहले) के समय पार्थिव-पूजन करके—

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवन्तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरङ्गमञ्ज्योतिषाञ्ज्योतिरेकन्तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥

—इस मन्त्रका यथाशक्ति जप करता रहे। स्त्री और शूद्र गीताजीके इस मन्त्रका जप करें—

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसंमूढचेताः।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्॥

इस प्रकार नव दिनोंतक रामायणका पारायण या श्रवण करे और रात्रिमें उपर्युक्त मन्त्रोंका जप करनेके पश्चात् अगले दिन प्रातःकालकी सन्ध्या करके नीचे लिखे मन्त्रोंका पारायण करे। यह पारायण प्रतिदिन तीनों सन्ध्याओंमें कम-से-कम एक बार होना चाहिये। जो अशक्त हो वह केवल दोनों सन्ध्याओंमें करे। पारायणसे पहले विधिपूर्वक यह विनियोग पढ़े—

ॐएतेषां सप्तचत्वारिंशन्मन्त्राणां परब्रह्म भगवान् रामचन्द्र ऋषिर्गाथाछन्दांसि, श्रीभगवान् रामचन्द्रो देवता श्रीभगवद्रामचन्द्रदर्शनप्राप्त्यर्थे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास करनेके पश्चात् '**ॐ रामाय नमः**' इस षडक्षर मन्त्रका न्यास करे। इसके पश्चात् भगवान् श्रीरामचन्द्रजीका ध्यान करे—

कालाम्भोधरकान्तिकान्तमनिशं वीरासनाध्यासितं
मुद्रां ज्ञानमयीं दधानमपरं हस्ताम्बुजं जानुनि।
सीतां पार्श्वगतां सरोरुहकरां विद्युन्निभां राघवं
पश्यन्तं मुकुटाङ्गदादिविविधाकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे॥

इस प्रकार भगवान् श्रीरामचन्द्रजीका ध्यान करके श्रीभगवान् शङ्कर तथा हनुमानजीसे हृदयमें प्रार्थना करता हुआ नीचे लिखी हुई गाथाओंका पाठ करे—

अथ हैनं भारद्वाजो याज्ञवल्क्यमुवाचाथ कैर्मन्त्रैः स्तुतः श्रीरामचन्द्रः प्रीतो भवति। स्वात्मानं दर्शयति तान्नो ब्रूहि भगवन्निति, स होवाच याज्ञवल्क्यः॥ पूर्वं सत्यलोके श्रीरामचन्द्रेणैवं शिक्षितो ब्रह्मा पुनरेतया गाथया नमस्करोति।

विश्वरूपधरं विष्णुं नारायणमनामयम्।
पूर्णानन्दैकविज्ञानं परब्रह्मस्वरूपिणम्।
मनसा संस्मरन् ब्रह्म तुष्टाव परमेश्वरम्॥

ॐ यो ह वै श्रीरामचन्द्रः स भगवानद्वैतपरमानन्द आत्मा यत्परं ब्रह्म भूर्भुवः सुवस्तस्मै वै नमो नमः॥ १॥

ॐ यो ह वै श्रीरामचन्द्रः स भगवानद्वैतपरमानन्द आत्मा यश्चाखण्डैकरसात्मा भूर्भुवः सुवस्तस्मै वै नमो नमः॥ २॥

ॐ यो ह वै श्रीराचन्द्रः स भगवानद्वैतपरमानन्द आत्मा यच्च ब्रह्मानन्दामृतं भूभुर्वः सुवस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३॥

ॐ यो ह वै श्रीरामचन्द्रः स भगवानद्वैतपरमानन्द आत्मा यत्तारकं ब्रह्म भूर्भुवः सुवस्तस्मै वै नमो नमः॥ ४॥

ॐ यो ह वै श्रीरामचन्द्रः स भगवानद्वैतपरमानन्द आत्मा यो ब्रह्मा विष्णुर्महेश्वरो यः सर्वदेवात्मा भूर्भुवः सुवस्तस्मै वै नमो नमः॥ ५॥

ॐ यो ह वै श्रीरामचन्द्रः स भगवानद्वैतपरमानन्द आत्मा ये सर्वे वेदाः साङ्गाः सशाखाः सेतिहासपुराणा भूर्भुवः सुवस्तस्मै वै नमो नमः॥ ६॥

ॐ यो ह वै श्रीरामचन्द्रः स भगवानद्वैतपरमानन्द आत्मा यो जीवान्तरात्मा भूर्भुवः सुवस्तस्मै वै नमो नमः॥ ७॥

ॐ यो ह वै श्रीरामचन्द्रः स भगवानद्वैतपरमानन्द आत्मा यः सर्वभूतान्तरात्मा भूर्भुवः सुवस्तस्मै वै नमो नमः॥ ८॥

ॐ यो ह वै श्रीरामचन्द्रः स भगवानद्वैतपरमानन्द आत्मा ये देवासुरमनुष्यादिभावा भूर्भुवः सुवस्तस्मै वै नमो नमः॥ ९॥

ॐ यो ह वै श्रीरामचन्द्रः स भगवानद्वैतपरमानन्द आत्मा ये मत्स्यकूर्माद्यवतारा भूर्भुवः सुवस्तस्मै वै नमो नमः॥ १०॥

ॐ यो ह वै श्रीरामचन्द्रः स भगवानद्वैतपरमानन्द आत्मा योऽन्तःकरणचतुष्टयात्मा भूर्भुवः सुवस्तस्मै वै नमो नमः॥ ११॥

ॐ यो ह वै श्रीरामचन्द्रः स भगवानद्वैतपरमानन्द आत्मा यश्च प्राणो भूर्भुवः सुवस्तस्मै वै नमो नमः॥ १२॥

रस-सिद्ध संत श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार की जीवन झाँकी

भगवान्‌के 'विशेष कार्य' हेतु १७ सितम्बर १८९२ ई०, दिन शनिवारको आपका जन्म शिलांगमें हुआ। कुल देवता श्रीहनुमानजीकी कृपासे जन्म होनेके कारण आपका नाम 'हनुमानप्रसाद' पड़ा। युवावस्थामें देश-सेवा—समाजसेवाकी प्रवृत्ति प्रबल होनेके कारण स्वदेशी आन्दोलनमें शुद्ध खादी प्रयोगका व्रत ले लिया। आपके क्रान्तिकारी गतिविधियोंमें सक्रिय भाग लेनेके कारण शिमलापालमें २१ माहतक नजरबन्द किया गया। बंगालके क्रान्तिकारियों अरविन्द घोष आदिसे आपका निकट सम्पर्क हुआ। १९१८ में आप बम्बई आ गये। वहाँ लोकमान्य तिलक, लाला लाजपतराय, महात्मा गाँधी, पं०मदनमोहन मालवीय, संगीताचार्य विष्णु दिगम्बरजीसे घनिष्ठ सम्पर्क हुआ। सभीके द्वारा प्रेमपूर्वक आपको भाई सम्बोधन करनेके कारण आपका उपनाम 'भाईजी' पड़ गया।

श्रीभाईजीमें अपने यश प्रचारका लेश भी नहीं था। इसी कारण उन्होंने 'रायबहादुर', 'सर' एवं 'भारतरत्न' जैसी राजकीय उपाधियोंके प्रस्तावको नम्रतापूर्वक अस्वीकार कर दिया। हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा उनकी अमूल्य हिन्दी-सेवाके सम्मानार्थ प्रदत्त 'साहित्य—वाचस्पति' की उपाधिका अपने नामके साथ कभी प्रयोग नहीं किये। हालाँकि भाईजीकी शिक्षा पारिवारिक, पारम्परिक ही रही लेकिन यह चमत्कार है कि कई भाषाओं पर उनका असाधारण अधिकार था। सुप्रसिद्ध हिन्दी मासिक पत्रिका 'कल्याण' के १९२६ ई०में प्रकाशन प्रारम्भ होनेपर उसके सम्पादनका गुरुतर दायित्व आपने सफलतापूर्वक निर्वाह किया और अपने भगीरथ प्रयत्नोंसे उसे शिखरपर पहुँचाया। उनके द्वारा सम्पादित 'कल्याण'के ४४ विशेषांक अपने विषयके विश्वकोष हैं। हमारे आर्ष ग्रन्थोंको विपुल मात्रामें प्रकाशित करके विश्वके कोने-कोनेमें पहुँचा दिये जिससे वे सुदीर्घ कालके लिये सुरक्षित हो गये। हिन्दी और सनातन धर्मकी उनकी सेवा युगोंतक लोगोंके लिये प्रेरणाश्रोत रहेगी। उनके द्वारा हिन्दी साहित्यको मौलिक शब्दोंका नया भण्डार मिला। उनकी गद्य-पद्यात्मक रचनायें अपने विषयकी मीलकी पत्थर हैं। श्रीभाईजी द्वारा विरचित १०० से अधिक पुस्तकें अबतक प्रकाशित हो चुकी हैं जिनमें उनके काव्य संग्रह 'पद-रत्नाकर' के अतिरिक्त 'राधा-माधव-चिन्तन', 'प्रेमदर्शन', 'भगवान् श्रीकृष्णकी मधुर बाललीलायें', 'वेणुगीत', 'रासपञ्चाध्यायी' 'रस और आनन्द' तथा 'प्रेमका स्वरूप' प्रमुख हैं। उनकी कुछ रचनाओंका विश्वकी कई भाषाओंमें अनुवाद हुआ है।

भगवन्नामनिष्ठाके फलस्वरूप वनवेशधारी भगवान् सीतारामके दर्शन हुए तदनन्तर पारसी प्रेतसे साक्षात् वार्तालापके परवर्तीकालमें अनेक दिव्यलोकोंसे सम्पर्क स्थापित किये।

भगवद्दर्शनकी प्रबलोत्कण्ठा होनेपर १९२७ ई० में भगवान् विष्णुने दर्शन देकर उन्हें प्रवृत्तिमार्गमें रहते हुये भगवद्भक्ति तथा भगवन्नाम प्रचारका आदेश दिया। क्रमशः दिव्यलोकोंसे सम्पर्कके साथ ही अलक्षित रहकर विश्वभरके आध्यात्मिक गतिविधियोंके नियामक एवं संचालक दिव्य संत-मण्डलमें अन्तर्निवेश हो गया। कृपाशक्तिपर पूर्णतया निर्भर भक्तपर रीझकर भगवान्‌ने समय-समयपर उन्हें श्रीराम, शिव, गीतावक्ता श्रीकृष्ण, श्रीव्रजराजकुमार एवं

श्रीराधाकृष्ण दिव्य युगलरूपमें दर्शन देकर तथा अपने स्वरूप तत्त्वका बोध कराकर कृतार्थ किया। १९३६ ई० में गीतावाटिकामें प्रेमभक्तिके आचार्य देवर्षि नारद और महर्षि अंगिरासे साक्षात्कार हुआ और उनसे प्रेमोपदेशकी प्राप्ति हुई। अपने ईष्ट आराध्य रसराज श्रीकृष्ण और महाभावरूपा श्रीराधा किशोरीकी भाव साधना, स्वरूप चिंतनसे उनकी एकाकार वृत्ति इष्टके साथ प्रगाढ़ होती गयी और वे रसराजके रस-सिन्धुमें निमग्न रहने लगे। भागवती स्थितिमें स्थित होनेसे उनके स्थूल कलेवरमें श्रीराधाकृष्ण युगल नित्य अवस्थित रहकर उनकी सम्पूर्ण चेष्टाओंका नियन्त्रण-संचालन करने लगे। सनकादि ऋषियोंसे उनके वार्तालाप अब छिपी बात नहीं है।

भगवत्प्रेरणासे भाईजीने अपने जीवनके बाह्यरूपको अत्यन्त साधारण रखते हुये इस स्थितिमें सबके बीच ७८ वर्ष रहे। कुछ श्रद्धालु प्रेमीजनोंको छोड़कर उनके वास्तविक स्वरूपकी कोई कल्पना भी नहीं कर सका। जो उनके निकट आये वे अपने भावानुसार इसकी अनुभूति करते रहे। किसीने उन्हें विद्वान् देखा, किसीने सेवा-परायण, किसीने आत्मीय स्नेहदाता, किसीने सुयोग्य सम्पादक, किसीने सच्चा सन्त, किसीने उच्चकोटिका व्रजप्रेमी और किसीको राधा हृदयकी झाँकी उनके अन्दर मिली। किसी संतकी वास्तविक स्थितिका अनुमान लगाना बड़ा कठिन है तथापि भाईजी निश्चित रूपसे उस कोटिके सन्त थे जिनके लिये नारदजीने कहा है—**'तस्मिंस्तज्जने भेदाभावात्'**—भगवान् और उनके भक्तोंमें भेदका अभाव होता है। श्रीभाईजीकी प्रमुख शिक्षायें हैं—१-सबमें भगवान्को देखना (२) भगवत्कृपापर अटूट विश्वास करना और (३)भगवन्नामका अनन्य आश्रय ग्रहण करना।

हमारी भावी पीढ़ियोंको यह विश्वास करनेमें कठिनता होगी कि बीसवीं सदीके आस्थाहीन युगमें जो कार्य कई संस्थायें मिलकर नहीं कर सकतीं वह कल्पनातीत कार्य एक भाईजीसे कैसे सम्भव हुआ। राधाष्टमी महोत्सवका प्रवर्तन और रसाद्वैत—राधाकृष्णके प्रति नयी दिशा एवं मौलिक चिन्तन इस युगको उनकी महान देन है। उनके द्वारा कितने लोग कल्याण पथपर अग्रसर हुये, वे परमधामके अधिकारी बने इसकी गणना सम्भव नहीं है। महाभाव—रसराजके लीलासिन्धुमें सर्वदा लीन रहते हुये २२ मार्च १९७१ को इस धराधामसे अपनी लीलाका संवरण कर लिये।

'वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम्'

आलोक : विस्तृत जानकारीके लिये गीतावाटिका प्रकाशन, गोरखपुरसे प्रकाशित ***'श्रीभाईजी—एक अलौकिक विभूति'*** पुस्तक अवश्य पढ़े।